

गिरीश-कृत



...ा का सर्वश्रेष्ठ, शिक्षाप्रद, ...
...काव्य ; हिन्दी के विद्वानों द्वारा मु...
...से प्रशंसित, मूल्य केवल आठ आ...

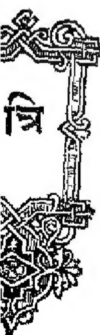
[गिरीश-प्रणीत]

लेखक-मण्डल
दारागञ्ज, इलाहाबाद
से
प्रकाशित



मधुपान

[१]



वेदी नारायण को उपन्यास पढ़ने का बड़ा शौक़ था। आज ही उसने 'एक रात में तीन क़त्ल' नाम का उपन्यास मँगाया था। परीक्षा की पुस्तकों को ताक़ पर रख कर उसी को पढ़ने में उसने भूख-प्यास भुला दी थी। धीरे-धीरे उपन्यास समाप्त हो गया, परन्तु समाप्त होकर भी

बनाये रखा। उपन्यास की नायिका कामिनी देवी और नायक प्रफुल्ल कुमार का चित्र उसकी आँखों के सामने घूमने लगा। शराब पीकर जैसे लोग नशे में उन्मत्त हो जाते हैं वैसे ही यह उपन्यास पढ़कर वह मतवाला हो गया। सोचने लगा कि कामिनी देवी जैसी नायिका के दर्शन कहां हो सकेंगे। इसी समय त्रिवेदीनारायण का समवयस्क सहपाठी रामकिशोर आ गया।

रामकिशोर ने पूछा—क्यों दोस्त, वह उपन्यास पढ़ लिया हो तो मुझे दे दो।

त्रि०—पढ़ तो लिया है, लेकिन—

'लेकिन' के आगे भी कुछ कहो, एकाएक चुप क्यों हो गये?—रामकिशोर ने त्रिवेदी नारायण को रुकते हुए देखकर तुरन्त ही कहा।

त्रिवेदीनारायण ने उत्तर दिया—लेकिन मैं तुम्हें सलाह दूँगा कि जब तक अपने लिए एक प्रेमिका की तलाश न कर लो तब तक उस उपन्यास को पढ़ने में हाथ न लगाओ। उपन्यास क्या है, अँगूरी शराब का मादक प्याला है, मेरी तबियत तो ऐसी बेचैन हो गई है कि कुछ पूछो मत। कामिनी देवी की शोखी, छेड़खानी, और चंचलता तबियत पर ऐसा असर करती

उसका पता-ठिकाना मालूम रहने पर भी यह ख़याल आता है कि उसे ढूँढ़ नहीं सकते तब तो मौत हो जाती है। राम किशोर, मेरी बात मानो, चलो हम तुम एक प्रेमिका ढूँढ़ें और उसी का नाम कामिनी देवी रख लें, तब इस उपन्यास का पूरा मज़ा मिलेगा।

रामकिशोर ने कहा—बात तो सच है, लेकिन हमारे लिए प्रेमिका कहां रखी है? और ढूँढ़ने कहां जायँ? शाक-भाजी ढूँढ़ना हो तो सब्ज़ी-मण्डी में ढूँढ़ आवें, लेकिन प्रेमिका तलाशने कहां जायँ?

त्रिवेदीनारायण बोला—मैं बताऊँ, चलो आज दालमण्डी की तरफ़ चलें, प्रेमिकाओं का तो वही अड्डा है।

अजी, वे प्रेमिकाएँ नहीं हैं, उनके चक्कर में एक बार पड़े के प्राणों पर बीती। प्रेमिका कोई और ही चीज़ है। सुनते हैं, प्रेमिकाएँ अपने प्रेमियों के लिए प्राण तक अर्पित कर देती हैं।

कोई बात तय न होती देखकर त्रिवेदीनारायण ने कहा—आख़िर किया क्या जाय?

रा०—पहले उपन्यास तो मुझे दो। प्रेमिका ढूँढ़ने के लिए तो सारी ज़िन्दगी पड़ी हुई है।

दिया। रामकिशोर ने तुरन्त ही प्रथम पृष्ठ खोल कर देखा। तबियत उलझ गई। वहाँ ठहरना अखरने लगा और कोई बातचीत न करके शीघ्र ही वह पुस्तक लिए हुए किसी एकान्त स्थान की ओर चला गया।



[२]

स्कूल में मास्टर साहब गणित पढ़ा रहे थे। और लड़कों का ध्यान मास्टर साहब के व्याख्यान की ओर था या नहीं, यह तो ठीक नहीं कहा जा सकता, लेकिन त्रिवेदीनारायण और रामकिशोर का तो निश्चित रूप से नहीं था। क्योंकि रामकिशोर उसी उपन्यास को पढ़ने में लगा था और त्रिवेदीनारायण उसके पढ़े हुए अंश के सम्बन्ध में तरह तरह के सवाल करने में। एकाएक मास्टर साहब ने त्रिवेदीनारायण से

त्रिवेदीनारायण चौंक कर उठा और बोला—जी हां।

मा० सा०—क्यों जी रामकिशोर ! तुम भी समझ गये ?

रामकिशोर पुस्तक पढ़ने में लीन था। उसने सुना ही नहीं।

मास्टर साहब ने ज़ोर की आवाज़ में पूछा—रामकिशोर तुम किस दुनिया में हो ?

एकाएक रामकिशोर हड़बड़ा उठा।

मास्टर साहब ने चिल्लाकर कहा—तुम क्या कर रहे थे ? ठीक ठीक बताओ।

रामकिशोर ने अब तक पुस्तक डेस्क में रख दी थी। मुख से विषाद का भाव प्रकट करते हुए उसने कहा—मास्टर साहब ! मेरे पिता जी बहुत बीमार हैं, घर से चिट्ठी आई है, वही देख रहा था।

मास्टर साहब ने कुछ नरम पड़ कर कहा—तुम्हे क्लास के बाहर जाकर चिट्ठी पढ़नी चाहिए थी।

रामकिशोर ने ग़लती स्वीकार कर ली।

कुछ सहानुभूति के स्वर में मास्टर साहब ने फिर पूछा—क्या ज़्यादा बीमार हैं ?

रामकिशोर ने उत्तर दिया—चाचा ने छुट्टी लेकर चले आने को लिखा है।

त्रिवेदीनारायण ने सिर नीचा करके मुसकराते हुए धी
कहा—यार तुमने अपनी और मेरी जान बचाई तो ख़ू
ीं तो कौन जाने आज बेत लग जाते, कम से कम बेंच प
खड़े होना ही पड़ता, डाँट फटकार तो सुननी ही पड़ती।

रामकिशोर ने भी उसी तरह उत्तर दिया—देखते जाओ
ताबों में पढ़ते आ रहे हैं कि सच बोलो, लेकिन सच बो
यहां बदन में दस-पन्द्रह दिन हल्दी लगानी पड़े।

जैसे-तैसे स्कूल बन्द हुआ। उसी दिन रात को बहुत दे
पढ़ कर रामकिशोर ने उपन्यास समाप्त कर दिया। भे
पर त्रिवेदीनारायण ने पूछा—कहो भाई, कामिनी दे
ी नायिका है ?

रा०—भाई, कुछ पूछो मत, कामिनी देवी ने तो मुझे
ल कर डाला। ख़याली कामिनी देवी ने तो यह ग़ज
हा, अगर कहीं मूर्त्तिमती कामिनी देवी दिखाई पड़ जायँ
फिर ग़रीबों की कैसे गुज़र होगी। बेचारा प्रफुल्लकुम
ार इस अजीब औरत के फन्दे में पड़ कर तबाह हो गया
ा अचरज की बात है।

त्रि०—अजी इसे तबाह होना नहीं कहते, यही तो ज़िन्द
लुत्फ़ है। मरते सभी हैं, एक वे हैं जो सूखी ज़िन्दगी बि
अशान्ति, अतृप्ति के नरक में दुख भोगते हैं और दूसरे व

रामकिशोर ने मुसकरा कर कहा—ये तो बड़ी लच्छे
ार बातें हैं, कहां किससे सीख लीं ?

अपनी तबियत से सीखीं, यह तो साधारण समझने क
ात है कि दुनिया का आनन्द लूटने ही के लिए हमने या
ोला पाया है।

रा॰—तो जब यही बात है तो हम लोग गणित, भूगोल
तिहास आदि के चक्कर में क्यों पड़ें ? चलो एक बार मौ
ी उड़ाई जाय।

त्रि॰—हां, लेकिन बनारस में मां-बाप के अधीन रहक
ी मौज उड़ाना सम्भव नहीं है। बात-बात में डाँट पड़त
हती है, घर हो या स्कूल, कहीं भी हमें चैन नहीं मिलता है
सा क्यों न करो कि एक बार कलकत्ते भाग चलें। सुना है
हां मामूली चपरासियों और गाड़ीवानों के साथ औरतें भाग
ड़ी होती हैं। यदि यह बात सच है तो वहाँ हमें प्रेमिकाएं
ावश्य ही मिलेंगी साथ ही एक बात और होगी। घर वाले
ी ज़रा चौकन्ने हो जायँगे और बाद को इतनी डाट-डपट नहीं
ंगे जितनी अभी रखते हैं।

रा॰—अच्छी बात है, चलेंगे।



[२]

दूसरे दिन रविवार को कुछ बहाना करके दोनों साथी अपने-अपने घरवालों को कुछ भी बताये बिना स्टेशन को रवाना हो गये। शीघ्र ही दोपहरवाली गाड़ी मिल गई। ड्योढ़े दर्जे में उनके बैठ चुकने के दस पन्द्रह मिनटों बाद गाड़ी कलकत्ते की ओर भक-भक करती हुई चल पड़ी। दोनों मित्रों के पास कहानी के मासिक पत्र और उपन्यास काफ़ी संख्या में मौजूद थे। कुछ दूर तक अपने-अपने बिस्तरों पर लेटे हुए वे

पढ़ने से तबियत ऊब गई तो रामकिशोर ने कहा— भाई साहब ! मुझे इस बात का बहुत सन्तोष है कि मेरा जो विचार कुछ दिनों से है वही अब आपका भी हो रहा है। मैं बहुत दिनों से यह सोचता आ रहा था कि जिसमें मनुष्य को इतना आनन्द आता है, जिससे उसे इतना आराम मिलता है उसे लोग बुरा क्यों कहते हैं, उसके पास जाने से इनकार क्यों करते हैं। झूठ बोलकर संसार में कितना फ़ायदा उठाया जा सकता है, इसका तजरबा मैं अनेक बार कर चुका हूँ, मेरा ख़याल है कि औरतों के साथ दोस्ती करने से भी बहुत लाभ होता होगा, क्योंकि जिस चीज का ख़याल ही होने से तबियत आनन्द से भर जाती है वह पूरा-पूरा अपने पास आ जायगी तब कितना आनन्द आवेगा, यह सहज ही अनुमान किया जा सकता है।

त्रिवेदीनारायण ने कहा—तो बताओ, कलकत्ते पहुँच कर किस तरह कोई प्रेमिका ढूँढ़ोगे ? कहीं ऐसा न हो कि मार खा जायँ। परदेस ठहरा, वहां अपना कोई मददगार थोड़े ही बैठा है।

रा०—मददगार वहां कोई है ही नहीं ! क्या कहते हो, भाई ! अरे तुम्हारी प्राणेश्वरी और मेरी भाभी के पिता वहीं तो रहते हैं। जब कोई आफ़त आ पड़ जायगी तो उनसे मदद

त्रि०—वाह, ख़ूब कही ! प्रेमिका की तलाश में मार ख
ा पुलीस के चक्कर में पड़ें तो ससुर से सहायता लें ! ख़
र उस अवस्था में, जब कि अभी ब्याह हुए भी अधिक दि
हीं हुए हैं। अजी मैं तो ऐसी दुर्गति होने की नौबत आने प
र जाना पसन्द करूँगा, किन्तु उनसे सहायता की बात
ासों दूर, जहां तक अपना बस चलेगा उनके कानों तक ख़ब
ा न जाने दूँगा। परन्तु ज़रा सोचो तो रामकिशोर, यो
ती घटना घट ही गई तो ख़बर पर मैं पहरा तो बैठा न
कूँगा। कलकत्ता शहर हिन्दी-समाचार-पत्रों का घर ठहर
र वे हिन्दी के प्रेमी हैं, समाचार-पत्र, मासिक पत्र आदि न प
उनका खाना न हज़म हो। ऐसी अवस्था में तो मेरे लिए डू
ने की बात हो जायगी। बहुत अच्छा किया जो तुमने या
ला दिया, भाई रामकिशोर ! कलकत्ते तो नाहक़ आये, यह
र पैर जकड़ उठेंगे, जाना ही था तो बम्बई जाते।

रामकिशोर ने उत्तर दिया—भाई, बात तो बहुत सही कह
। लेकिन फिर भी कलकत्ते से एक फ़ायदा हो सकता है।

त्रि०—सो क्या ?

रामकिशोर ने मुसकराते हुए जवाब दिया—यही कि कल-
ा में अपने उद्योग में निराशा और असफलता होने पर भी
ा पोंछने का ...

त्रि०—आख़िर कुछ कहोगे भी कि इसी तरह भूले में झुलाते ही रहोगे? जो लोग पहेलियों में बोलते हैं उन्हे मैं पसन्द नहीं करता।

यह कह कर त्रिवेदीनारायण ने ऐसी मुख-मुद्रा बनाई जैसे उसे अपनी उत्सुकता शान्त करने की कोई इच्छा न रह गयी हो।

रामकिशोर ने परिहासपूर्वक कहा—भाई तुम अगर मुझे न पसन्द करोगे तो मेरी कौन बड़ी हानि हो जायगी? तुम कोई प्रेमिका भी तो नहीं हो, जिससे मैं डरूँ।

यह सुनकर त्रिवेदीनारायण हँस पड़ा और उसकी क्षणिक उदासीनता इसी हँसी में डूब गई। रामकिशोर भी हँसने लगा। फिर बोला—भाई मेरा मतलब कहने का यह है कि अगर कोई और प्रेमिका न मिलेगी तो जिस प्रेमिका पर तुम्हारा पूरा अधिकार है और तुम्हारी वजह से जिस पर मेरा भी थोड़ा बहुत अधिकार है ही, वह तो कहीं नहीं गई है।

त्रिवेदी नारायण बड़े ज़ोर से अट्टहास कर पड़ा। उसकी ऊँची हँसी के साथ अपनी हलकी हँसी को संयुक्त करते हुए रामकिशोर ने कहा—हां भाई, सोचो न, ठीक ही तो कह रहा हूँ। कलकत्ते चलना हर तरह से लाभकारी ही होगा।

मधुपान |

[४]

सारी रात चलकर जब गाड़ी कलकत्ते के निकट पहुँची तब एक विचित्र घटना घट गई।

सवेरा हो गया था। रामकिशोर जल के लिए नीचे उतरा। ग़लती उसने यह करदी कि जिस स्टेशन पर गाड़ी कम ठहरती थी वहाँ यह समझ कर कि वह ज़रूरत के लिए काफ़ी देर ठहरेगी उसने बहुत इतमीनान से काम लिया।

ौर वह अभी हाथों में मिट्टी लगाये हुए पाइप के पास से
ीड़ हटने की प्रतीक्षा ही कर रहा था। एकदम से हड़बड़
र उसने पाइप पर अधिकार करने की कोशिश की, जिसक
रिणाम यह हुआ कि एक छोटा सा बच्चा धक्का खाकर
िर पडा। यह होने पर भी रामकिशोर को पानी मिलने में
ासानी न हो सकी, गिरे हुए बच्चे की क्रुद्ध माता ने राम
िशोर के साथ वाग्युद्ध छेड़ दिया। इस कलह में गाड़ी छूट
ई और ज्यों का त्यों हाथ में मिट्टी लगाये हुए, रामकिशोर
त्रिवेदी नारायण को खिड़की में से सिर निकाल कर घबराहट
ो भरे स्वर मे शीघ्र डब्बे में चढ़ आने के लिए बारम्बार
चिल्लाता देखकर भी पहले तो केवल हक्का बक्का सा रह
या और फिर जब दौड़कर पागलों की तरह प्रयत्न करने
ो लगा तो सफल न हो सका। शीघ्र ही गाड़ी अपनी पूरी
ज़ी में आगयी और रामकिशोर को हाथ मीज कर रह
ाना पड़ा।

पाइप के पास बच्चा अब भी रो रहा था और मां उसे
ुप करा रही थी। निराशा में डूबे हुए राम किशोर को वहां
ोबारा हाथ धोने को आया देख उसने कहा—क्यों भैया, बच्चे
ो रुलाया भी और गाड़ी भी न पायी।

रामकिशोर इस व्यंग से कट सा गया।

[५]



अपनी कन्या कुसुम का विवाह करने के बाद, तीन महीने की छुट्टी बिताकर, जब श्यामसुन्दर मिश्र देश से नौकरी पर कलकत्ते को लौटे, तो मित्रों और प्रेमियों की एक छोटी सी दावत और साथ ही एक कवि-सम्मेलन का आयोजन उन्होंने कर डाला।

शाल होने के कारण इस प्रकार के उत्सवों के लिए विशेष उप-युक्त था। नीचे का खण्ड एक तमोलिन ने ले रखा था, जिसकी दूकान की सजावट उसके शारीरिक लावण्य के अनुरूप ही थी।

मिश्रजी के यहाँ दावत का दिन आ पहुँचा। धूम मच गई। कलकत्ते के अच्छे-अच्छे संगीतज्ञों और कवियों के आने से उत्सव की शोभा बढ़ चली। पान के बीड़े पहुँचाने का ठेका उक्त तमोलिन ने ले लिया था और इसके प्रबन्ध का भार स्वयं कुसुम पर था।

तमोलिन के हाथ से बीड़े स्वीकार करते हुए कुसुम ने मुसकराकर उससे पूछा—बीड़े अच्छे तो हैं न ?

अच्छे न हों तो चाहे जो दण्ड दे लेना—यह कहकर तमोलिन ने भी मुसकरा दिया।

मुसकराहट दो हृदयों को एक कर देने के लिए अचूक तार का काम देती है और कुसुम सहज ही तमोलिन की ओर आकर्षित हो गई।

तमोलिन चलने लगी तो कुसुम ने पूछा—तुम्हारा नाम क्या है तमोलिन ?

तमोलिन के होठों पर फिर मुसकान की एक हलकी रेखा आ गई। उसने उत्तर दिया—बबुई, मेरा नाम तो रूपकुमारी

यह कहकर रूपा चली गई और कुसुम तश्तरियों में प
बीड़े, इलायची, गरी के टुकड़े, लौंग आदि चीज़ें क़ार
साथ रखने लगी।

उत्सव समाप्त होने के बाद भी रूपा पान देने के लि
अजी के घर में प्रायः आती जाती रहती थी और कुसु
। माँ की अपेक्षा कुसुम ही से उसे अधिक काम पड़ने
रण उससे बातचीत करने का मौक़ा भी काफ़ी मिलता था
। प्रकार धीरे-धीरे रूपा और कुसुम की घनिष्ठता बढ़ चली
ा ने स्वयं भाभी बनकर कुसुम को ननद बना लिया औ
ह-तरह के हँसी-मज़ाक के लिए रास्ता साफ़ कर लिया।

एक दिन रूपा ने पूछा—क्यों ननदजी, तुमने ननदोई व
ा तो तुम्हें अच्छा लगा या ख़राब ?

कुसुम ने हँसती हुई आँखों की रखवाली करनेवाली भन्तु
हार भौंहों को तानकर कहा—तुम बस मार खाने वाल
। देखो, अब जो तुमने फिर कभी यह सवाल किया तो त
हें मारे बिना नहीं छोड़ूंगी। समझ रखो, तुम्हारे ऊप
त लगाने का मेरा उतना ही अधिकार है जितना भा
हब का है।

उस दिन रूपा हँसती हुई चली गई। कुसुम ने समझा
मेरी जीत हो गई। रूपा ने मन ही मन कहा—[illegible]

रूपा फिर आई तो फिर उसने वही बात की और कुसु
ने उसे उसी प्रकार प्यार भरे शब्दों में डाँटा। उस दिन भी रू
हँसती हुई और कुसुम को विजय की मदिरा पीने का अवस
देती हुई चली गई।

इसके बाद रूपा कई दिनों तक नहीं आई। कुसुम ने उ
बुलवा भी भेजा तो बीमार होने का बहाना करके वह अप
घर से टस से मस न हुई। कुसुम उसके लिए बहुत बेचैन
गई। रूपा चाहती भी यही थी। उसकी बीमारी बीमारी न
थी, एक चाल थी। अन्त में जब वह गई तो कुसुम ने क
दिनों की कसर निकाल लेनी चाही। किन्तु, उसके बहुत छेड़
पर भी रूपा ने यही कहा—ननद, दिक मत करो, तबिय
अच्छी नहीं थी, सिर्फ़ तुम्हें देखने के लिए चली आई हूँ।

चंचल कुसुम ने कहा—भाभी, अगर तुम दिक़ होने
करती हो, तो तुम मेरी भाभी क्यों बनीं? भाभी का तो का
ही दिक़ होना और ननद का दिक़ करना है। यह तो वैसे
हुआ कि शादी तो हुई, लेकिन जब पति-पत्नी से मिलने
लिए जाय तो वह कहे कि अजी मुझे परेशान मत करो, मैं
तुम्हारी सूरत से नफ़रत करती हूँ। भाभी तुम्हारे और को
ननद तो नहीं है?

रूपा ने उत्तर दिया—नहीं, इसीलिए तो तुम्हें बनाया

किसी ननद का तजरबा नहीं था। तुमने समझा होगा कि कुसुम एक सीधी-सादी लड़की है, चलो इसको ख़ूब चिढ़ाया करूँगी—कुसुम ने कहा।

रूपा—ठीक कहती हो ननद! मैंने ऐसा ही सोचा था अब भविष्य में ऐसी ग़लती नहीं करूँगी। हाँ, एक बात तुमसे पूछूँ, नाराज़ तो न हो जाओगी बबुई!

कुसुम ने हँसकर कहा—भाभी तुम्हारा एक ख़ून माफ़ है। तुम जो चाहो सो पूछो।

रूपा—ननद, यहाँ कहीं कोई नहीं सुन रहा है, फिर भी अगर किसी के सुनने का डर हो तो मेरे कान में कह सकती हो। मैं यह जानना चाहती हूँ कि क्या तुमने किसी से प्रेम भी किया है?

कु०—प्रेम सभी से करती हूँ, क्या किसी से दुश्मनी रखती हूँ, पगली।

रूपा—ऐसी बात नहीं ननद! कभी किसी पुरुष से प्रेम किया है?

कु०—पुरुष किसे कहते हैं भाभी?

यह कहकर कुसुम हँसने लगी।

रूपा ने उत्तर दिया—पुरुष उस जानवर का नाम है, जिसके दो हाथ और दो पैर होते हैं और जिस पर स्त्रियाँ

. कुसुम ने मुसकराकर कहा—तो मैंने तो कभी किसी जान
से न प्रेम किया न अदावत ही की, भाभी। तेरा हा
क्षेत्र है, तू किसी जानवर से भी मुहब्बत लगा बैठी हो त
ई अचरज की बात नहीं।

रूपा—मेरा क्या पूछती हो ननद ! मैं तो पान के बी
ाती हूँ। जितने मुए पान खाने आते हैं, सब समझते हैं f
उनसे प्रेम करती हूँ। लेकिन तुम्हारी बात और है, तु
किसी की पहुँच नहीं, ऐसी दशा में भी अगर तुम्हा
ायत किसी से लग जाय तो मज़ा आ जाय, मेरी क़ीम
जाय और तुम्हें चिढ़ाने के लिए भी मुझे आराम हो जाय

कु०—भाभी तुम तो अभी मेरी दृष्टि में बेशक़ीमत ह
हारी कोई क़ीमत आँकी नहीं जा सकती।

रूपा—हाँ, लेकिन जब प्रेम की पीड़ा तुम्हारे हृदय व
ागी, तब मैं ही तुम्हें याद आऊँगी। इसलिए उस समय
हारे लिए और की और हो जाऊँगी।

कु०—क्या प्रेम में पीड़ा भी होती है, भाभी ? उसमें
ठास होनी चाहिए।

रू०—ननद ! ये बातें बताने की नहीं हैं, ये अनुभव कर
हैं। जब कहीं दिल उलझन में पड़ जायगा तब मुहब्बत
े-तीते स्वाद का तुम्हें पता चल जायगा।

से कोई लाभ नहीं है । मैं तो इस वस्तु को आज जानना चाहती हूँ ।

रू०—अच्छा, अब आज जाने दो, देर हो रही है, सास नाराज़ होती होंगी, कल तुम्हें बताऊँगी ।

कु०—यह क्यों नहीं कहती कि भाई साहब नाराज़ होते होंगे, झूठ-मूठ बूढ़ी को बदनाम क्यों करती है ?

रूपा हँसती हुई चली गई ।



[६]

कई दिनों के बाद रूपा फिर आई तो अपने साथ एक लिफ़ाफ़ा ले आई। दूर ही से लिफ़ाफ़ा कुसुम को दिखाकर उसने कहा—ननद, प्रेम की पीड़ा इसी में बन्द है, देखना चाहो तो देख सकती हो।

कुसुम की उत्कराठा बढ़ गई। उसने लिफ़ाफ़ा रूपा के हाथ से लेना चाहा। किन्तु रूपा उसे सहज में देनेवाली नहीं थी।

आने पर ही रूपा ने लिफ़ाफ़ा उसे दिया। फाड़कर वह पढ़ने लगी। उसमें एक कविता थी—

प्राणेश्वरि !

मूर्त्ति मधुर मनहारिणि तेरी
देखी है मैंने जब से।
मन्मथ मथित हृदय है मेरा
नेक न कल पड़ती तब से।
सरल चितौन दिखाकर तू ने
घायल कर डाला मुझको।
निशिदिन सोचा करता हूँ बस
कैसे पाऊँगा तुझको।
थोड़े दिन के बाद यहाँ से
हाय चला मैं जाऊँगा।
तू गड़ गई कलेजे में है
कैसे हाय भुलाऊँगा।
कह यदि तू न मिलेगी मुझको
तो क्या गति मेरी होगी।
आठों याम कराल भुजंगी

लज्जा औ संकोच कहाँ लौं
कब लौं तुझको टोकेंगे ?
कितने बार बता प्राणेश्वरि !
वे तेरा मग रोकेंगे ?
अधिक विलम्ब न कर सुकुमारी,
सारे बन्धन तोड़ अभी।
व्याकुल प्रेमिक पास चली आ
भय-भावों को छोड़ सभी।

तुम्हारा प्रेमी
भ्रमर

यह कविता पढ़कर कुसुम ने पूछा—भाभी यह कविता किसने लिखी है और किसको लिखी है ?

रूपा ने उत्तर दिया—एक प्रेमी ने अपनी प्राणेश्वरी के पास लिखकर भेजी है।

कु०—प्राणेश्वरी तो तुम हो, यह तो मैं जानती हूँ, किन्तु यह प्रेमी कौन है ?

रू०—प्राणेश्वरी मैं नहीं हूँ ननद, वह तो तुम हो सकती हो, क्योंकि वास्तव में पत्र उसका है जो लिफ़ाफ़ा फाड़े और

कुसुम ने रूपा के इस कथन को सुनकर मुसकरा दिया
र बोली—अच्छा यह झगड़े की बात है। यह बताओ
प्रेमी कौन है ?

रू०—एक पागल आदमी।

कुसुम ने अचरज का भाव प्रकट करते हुए पूछा—अ
ी भी है, पागल भी है, कवि भी है—यह विचित्र आदम
न सा है ? ज़रा मुझे दिखा दोगी भाभी ?

रू०—हाँ, हाँ, दिखा दूँगी।

कु०—लेकिन शर्त यह है कि वह मुझे न देखने पाये।

रूपा ने पान की लाली से लाल अधरों पर मुसकराह
चन्द्रिका रखते और मटकते हुए कहा—बीबी, तुम्हें
ने पहले ही से देख लिया है, नहीं तो यह चिट्ठी क
खता ? कभी छत पर खड़ी होकर तुमने संध्या समय उ
के प्यासे को दर्शन देकर तड़पा दिया है।

कुसुम चुप हो गई।

उस दिन उतना काम यथेष्ट समझ कर रूपा चली गई
के चले जाने के बाद कुसुम ने उस कविता को बार-ब
नां शुरू किया, क्योंकि रूपा के सामने संकोच के कारण उस
ा सा देख कर ही उस कविता को अलग कर दिया थ
दिन चार बजे ही से कुसुम ने मुँडेली छत पर बार-ब

वह उस प्रेमी की तलाश में रहती। कई बार तो सामने ही सूर्य की किरणों ने उसे परेशान करके वहाँ से हटा दिया, किन्तु, जब सूर्य के अस्त होने का समय आया, तब उसकी इस छोटी सी तपस्या का फल मिला सा जान पड़ा। उसने एक नवयुवक के मधुर रूप का दर्शन करके अपूर्व आनन्द लाभ किया। उसका लावण्य इतना मनोमोहक था कि उस पर से उसकी आँखें किसी प्रकार हटती ही नहीं थी। वह नवयुवक भी रह-रहकर कुसुम की ओर देख लेता था। ऐसा जान पड़ता था, मानों दोनों के मन एक अटूट बन्धन में बँध गये। परन्तु शीघ्र ही अँधेरा फैल गया। आँखों को जो यह स्वर्गीय आनन्द मिल रहा था, सो एकाएक लुट गया, घने अँधेरे ने दोनों के लिए एक दूसरे के अस्तित्व का ही लोप कर दिया। और जब चिरागों का प्रकाश आया भी तो मानों उसने साफ़-साफ़ कह दिया कि अपने-अपने कर्तव्यों की ओर ध्यान दो।

एक विचित्र वेदना का अनुभव करती हुई कुसुम नीचे आयी। उसके रोम-रोम से यही पुकार उठती थी कि यदि इस मनोहर मूर्त्ति को पाऊँ तो आँखों की पुतली पर बिठा लूँ। उसके जी ने न माना, घर के कामों को सँभालकर, बहाने से फिर वहीं पहुँच गई, जहाँ से उस युवक के दर्शन होते थे। वह अब भी वहीं खड़ा था। इस बार तो कुसुम की दृष्टि, उसका मन,

इस आशंका ने उसे होश में लाने की बड़ी चेष्टा की। लेकिन आज कुसुम ने प्रेम की जो ताज़ी शराब पी ली थी, उसका चसका अटूट था। अन्त में हुआ यह कि जब तक माँ ने आ कर दो-चार बातें कहीं नहीं, तब तक उसके पैर यहाँ से हिल न सके। गरमी में प्यासे के सामने से शीतल जल का कटोरा हटाने से उसे जो व्यथा होती है, उसी व्यथा का अनुभव करती हुई अधमरी सी होकर कुसुम माँ के साथ गई। उसने मन ही मन पूछा—क्या प्रेम की पीड़ा इसी को कहते हैं? जिसने मेरे पास प्रेम-पत्र लिखकर भेजा है, उसे भी क्या मेरे कारण उतनी ही वेदना होती होगी जितना मुझे इस नवयुवक के कारण हो रही है?

घर के कामों को बेगार की तरह जैसे-तैसे निपटाकर कुसुम ने उस पत्र की कविता-पंक्तियों को फिर देखना शुरू किया जो रूपा दे गई थीं। उसने देखा कि उसमें के एक-एक शब्द स्वयं उसकी वेदना को प्रकट कर रहे थे और यदि कहीं अन्तर था तो स्त्री और पुरुष-वाचक विभक्तियों आदि में। उसने बड़ी आसानी से उस कविता का रूप इस प्रकार कर डाला—

प्राणेश्वर !

मूर्ति-मंजु औ मधुर तुम्हारी,

मन्मथ-मथित हृदय है मेरा
नेक न कल पड़ती तब से ॥

सरल चितौन दिखाकर तुमने,
घायल कर डाला मुझको ।
प्रति पल सोचा करती हूँ बस,
कैसे पाऊँगी तुमको ॥

चले यहाँ से जाओगे तो,
कैसे धीरज पाऊँगी ।
तुम गड़ गये कलेजे में हो,
कैसे हाय भुलाऊँगी ॥

कहीं मिलोगे मुझे नहीं तुम,
तो क्या गति मेरी होगी ।
आठो याम कराल भुजंगिनि सी,
विषाद-ढेरी होगी ॥

लज्जा औ संकोच कहाँ लौं,
कब लौं तुमको टोकेंगे ।
कितने बार कहो प्राणेश्वर,
राह तुम्हारी रोकेंगे ॥
अधिक विलम्ब करो मत प्यारे,

व्यथित प्रेमिका के ढिग आओ,

भय-भावों को छोड़ सभी ॥

तुम्हारी प्रेमिका

कमल

इस कविता के तैयार हो जाने पर कुसुम का जी फड़क उठा। उसने मन ही मन 'भ्रमर' को वह कविता भेजने तथा रूपा को उसके पास पहुँचाने के लिए धन्यवाद दिया। बारम्बार पढ़ते-पढ़ते वह कविता कुसुम को कण्ठस्थ हो गई। उस समय उसकी बहुत इच्छा हुई कि रूपा सामने होती, किन्तु यह समय उसे बुलाने का नहीं था। इसलिए जैसे-तैसे रात बिताने का ही उसने निश्चय किया।



[७]

दूसरे दिन दस बजे के बाद घर के कामों से छुट्टी पाते ही कुसुम ने रूपा को पान दे जाने का सँदेसा भेजा। रूपा तुरन्त ही आ पहुँची।

रूपा ने बैठते-बैठते पूछा—उस पत्र का कोई उत्तर लिखा है क्या बहुई ?

एक हलकी मुसकराहट रूपा के अधरों और आँखों पर थी।

उसी को तोड़-मरोड़कर मैंने अपने काम के लायक़ बना लिया है। मैं जिसे बताऊँ यदि मेरी इस कविता को उसी के पास पहुँचा दो, तो मेरी बहुत सहायता हो जाय भाभी ! बोलो करोगी मेरा काम ?

रूपा—क्यों नहीं करूँगी ? इतनी जल्दी तुमने प्रेम की पीड़ा को समझ लिया, यह क्या मेरे लिए कम आनन्द की बात है !

कु०—मेरे कष्ट में तुझे आनन्द होता है भाभी !

रू०—यह कष्ट नहीं है बहुई, यही जीवन का आनन्द है। परन्तु, मुझे कैसे मालूम होगा कि चिट्ठी इन्हें देनी है। सड़क पर तो न जाने कितने आदमी आया जाया करते हैं।

कु०—पहले यही क्या ठीक कि वह आज भी आवेगा ही। उसे मेरे दर्द का हाल क्या मालूम ? लेकिन अगर आज आवेगा तो मैं उसी समय महरी के हाथ यह पत्र तेरे पास भेज दूँगी।

बहुत अच्छा कहकर रूपा चली गई।

कुसुम ने आज भी चार बजे ही से छत पर मँडराना शुरू कर दिया। थोड़ी ही देर में वही मधुर मूर्त्ति उसे फिर दिखाई पड़ी। उसने तुरन्त ही नीचे उतरकर महरी के हाथ रूपा के पास चिट्ठी भेज दी। रूपा चिट्ठी पाते ही दौड़ी आई और उक्त नवयुवक को छत पर देख आने के बाद कमरे में चारपाई पर बैठी हुई कुसुम के कान में बोली—बहुई, यह तो

भेजा है। उसके लिए यह बड़े सौभाग्य की बात है कि तुम स्वयं उसके पीछे पागल हो गईं।

कुसुम ने मुसकराकर अपने हृदय के हर्ष को प्रकट करते हुए कहा—और क्या यह मेरे सौभाग्य की बात नहीं है, भाभी! दूसरा कोई होता, तो शायद मेरी ओर आकर्षित न होता।

यह भी कोई बात है बबुई! तुम्हारी मन्द चितवन की एक चोट से पत्थर भी कराहने लगे, मनुष्य की क्या बिसात है! तुम्हें शायद अभी अपनी शक्तियां मालूम नहीं हैं ननद! तुम्हारे बालों की एक लट बड़े-बड़े ज्ञानियों के मन को बाँधने के लिए काफ़ी है। तुम्हारी रसीली मुसकान, तुम्हारी बाँकी चितवन, तुम्हारी मस्तानी चाल देख कर ऐसा कौन पुरुष है जो अपने संयम को रख सके। तुम्हारे ऊपर मर्द की कौन कहे, स्त्रियाँ मोहित हो जाती हैं ननद!

यह कहकर रूपा ने जल्दी से कुसुम के कपोलों पर अपने होंठ रख दिये।

कुसुम ने चिढ़ने का बहाना करते हुए कहा—भाभी, अब तू मार खाएगी।

रू०—यहाँ कोई देख थोड़े ही रहा है बबुई, तुम्हारी मार की मुझे कोई परवा नहीं है। तुम इसी तरह मार खिलाती चलो और मैं तुम्हें प्रेम का रस चखाती चलूँ।

रू०—घबराओ मत, ऊबोगी नहीं, इसमें तभी तक ऊब मालूम होती है जब तक अच्छी तरह डूबो न। मेरी बातें सच हैं या झूठ, यह तुम्हें आगे चलकर मालूम होगा। अच्छा, अब मैं तुम्हारे पागल प्रेमी को तुम्हारे पागलपन की चिट्ठी देने जाती हूँ। लेकिन तुम्हारी उसकी भेंट कैसे होगी बबुई ?

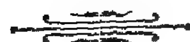
कु०—मैं यह क्या जानूँ ? मैं तो यही जानती हूँ कि उससे भेंट न होगी तो मैं पागल हो जाऊँगी।

रूपा ने हँसकर कहा—जैसे अभी तुम पागल नहीं हो। ख़ैर। इधर तुम्हारे बाबू जी कहीं आयँगे तो नहीं ?

कु०—बाबू जी जायँ या न जायँ, इससे क्या मतलब ? तुम कोई ऐसा उपाय करो कि वह यहीं रह जाय। मैं उसे हरदम देखती रहना चाहती हूँ। बाबू जी देखने में कोई बाधा तो डाल नहीं सकते।

रूपा आँखों में शरारत भरे हुए हँसने लगी।

\+ \+ \+



विष के घूँट

ारानी अपने को बताती तो थी जाति की कहा-रिन, लेकिन उसकी सूरत-शकल उसे किसी ऊँचे कुल की स्त्री घोषित करती थी। जो हो, जैसी रूपवती वह थी वैसी बड़े घर की भी बहुत ही कम बहुएँ होंगी। तीन चार वर्ष हुए, प्रयाग में वह गर्भवती की अवस्था मे आई थी। त्रिवेणी जी के तट पर यात्रियों से भिक्षा के रूप में जो कुछ

ही मनचले महाशय उसे अधिक पैसा देना चाहते थे और उसक दुख-कथा सुनने के लिए उसके पास घण्टों बैठते थे, वह उनक मतलब समझ जाती थी और न उनका पैसा लेती, न उन्हें अपनी दुख-गाथा सुनाती। वह चार बजे त्रिवेणी में स्नान करती और वेनीमाधव जी, महावीर जी, तथा महादेव जी से अपनी गोद के लाल राजाराम के चिर जीवन का आशीर्वाद माँगती। पहिले सभी पंडे उससे अच्छा व्यवहार करते थे, उसको कुछ आमदनी करा देते थे, लेकिन कुछ दिनों के बाद वह सब को अप्रिय हो गई। उन लोगों ने पहले तो यात्रियों को उसके विरुद्ध भड़का कर उसकी आमदनी मारी, और फिर जब इस पर भी महारानी भगवान का नाम लेती और किसी प्रकार की चिन्ता न दिखाती तब वे अनेक प्रकार के कष्ट देने लगे। कभी वे राजाराम को इस कारण पीट देते कि वह धूल लगाये हुए उनके तख्ते पर चढ़ जाता था, और कभी उसी को इसलिये मार देते कि यात्रियों से भिक्षा माँगने के लिए वह बेमौक़े खड़ी होती थी। एक दिन वहाँ एक महात्मा आये, उन्होंने महारानी की दशा देखी। राजाराम वहीं खेल रहा था, उसे महात्मा जी ने प्रेम समेत गोद में ले लिया। जिस बच्चे को अब तक नीच से नीच आदमी की भी मार खानी पड़ी थी, उसे साधु की गोद में देख कर महारानी का जी उल्लास से भर गया। वह गद्गद होकर बोली

[...] दुःख कटेंगे भी ? महात्मा बोले—यही बालक तेरे कष्टे[...]
[...] मूल है, जब तक यह तेरे साथ रहेगा, तू दुख ही दुख[...]
[...]ी रहेगी, यदि तू चाहती है कि तेरे क्लेशों का अन्त हो[...]
[...] इस लड़के को अपने से अलग कर दे। यह कह क[...]
[...]त्मा ने महारानी की आँखों की ओर बड़े ध्यान से देख[...]
[...]र प्यार से बोले—बेटी, तू दुखी मत हो, तुझे शीघ्र ह[...]
[...]न्ति मिलेगी। थोड़ी देर थम कर उन्होंने फिर कहा—बेटी[...]
[...] इस बच्चे को मुझे दे सकती हो ? महारानी रोकर बोल[...]
[...] महाराज आपकी बात मैं कैसे काटूँ, लेकिन आप ही सोचे[...]
[...]के बिना मैं कैसे जीऊँगी। महारानी फिर महात्मा क[...]
[...] पकड़ कर रोने और कहने लगी—महाराज किसी तर[...]
[...]क अबला का दुख काटिए। महात्मा ने महारानी के सि[...]
[...] हाथ फेरते हुए कहा—ईश्वरेच्छा के सामने सि[...]
[...]का बेटी। महात्मा के प्यार ने महारानी को ऐसी शान्[...]
[...] जैसी गंगा जी का जल गरमी के सताये लोगों को दि[...]
[...]ता है। महात्मा ने यह समझ कर कि महारानी का बच[...]
[...] बिलग होना कठिन है, अपने झोले में से एक यन्त्र निकाल[...]
[...] कहा—बेटी, तेरे पतिदेव तुझे शीघ्र मिलेंगे और अन्त[...]
[...]ण करेंगे, इस बालक पर बड़ी बड़ी विपत्तियाँ आवेंगी, इ[...]
[...]त्र को इसे पहिना दो, मैं एक मंत्र बतला देता हूँ, कठिन[...]

[६]

महारानी जहाँ कहीं भी जाती थी, राजाराम को अपने साथ ले जाती थी। उसे छोड़ कर उसके पास न कुछ माल था न असबाब, इस कारण जब वह पंडों के उत्पीड़न से घबड़ाकर अन्यत्र रहने के लिए जाने लगी तो देखने वालों ने यह न समझा कि यह वहाँ से चली जा रही है, उन्होंने यही सोचा कि वह किसी काम से कहीं जाती है। महारानी बाँध

जाड़े का डर था न पानी का, रात अँधेरी थी ही, उसने वह रात उसी पेड़ के नीचे काटने का निश्चय किया।

महारानी को उसी पेड़ के नीचे रहते धीरे धीरे कई दिन बीत गये। यहाँ कष्ट अधिक अवश्य था, परन्तु झंझट भी कम था। यहाँ आने पर कई वृद्धा स्त्रियों ने करुणा-वश उसे कई आने पैसे दे दिये। इन पैसों में से बहुत थोड़ा खर्च करके उसने शेष को इसलिए जोड़ रक्खा कि यथेष्ट हो जाने पर अपने लिए एक झोपड़ी खड़ी कर लूँ। पन्द्रह-बीस दिनों के बाद उसका यह स्वप्न कार्य्य रूप में परिणत हो गया। दोपहर की कड़ी धूप से बच्चे की रक्षा होने का उपाय हो गया।

महारानी का जीवन यहाँ प्राय शान्तिपूर्वक व्यतीत होने लगा। किन्तु, जान पड़ता है, अदृष्ट ने उसके साथ शत्रुता करने का पक्का निश्चय कर लिया था। क्योंकि, किसी ने आकर पास-पड़ोस के लोगों से कह दिया कि महारानी ब्राह्मण विधवा है और राजाराम का जन्म पाप से है। राजाराम के सम्बन्ध में ऐसी विचित्र बातें सुनकर सुनने-वाले सन्न रह गये। एक बुढ़िया ने कहा—भैया तभी तो जब से वह आया है, तब से हम सब की बरकत नहीं है। एक नौजवान ने कहा—देखो, न, क्षेत्र भर के लड़कों की मिठाई लेकर कोल्हू सा हो गया है साला। एक अधेड़ औरत

व पूछिए तो सभी के दिल में दहशत पैदा हो गई औ
ी अपनी अपनी विपत्ति कहकर उसका दोष राजाराम
ाँ आने पर मढ़ने लगे। किसी के घर में आग लगी तो
जाराम के कारण, किसी का बूढ़ा बैल मर गया तो व
जाराम की वजह से। भिखारियों ने कहा कि इस गाँव
ा, जब से लड़का यहाँ आया तब से क्षेत्र भर की आमद
ी गयी, यात्री कम आते हैं, बेचारे मल्लाहों को भी कु
ीं बचता और पण्डे तो इसको सौ सौ गालियाँ देते हैं
प्रकार लोगों के मानसिक नेत्रों के सामने राजाराम
भयङ्कर मूर्ति खिंच गयी। उस मूर्त्ति से वे बेतरह ड
, राजाराम की काली शकल ने उनके डर को और भी ब
ा। उन्होंने अपने लड़कों को ख़ूब डाट दिया कि वे राज
के साथ कभी न खेलें, और सबको यह अच्छी तर
झा दिया गया कि राजारामको कहीं आश्रय न मिल
। आश्रय देने का अर्थ सब को बता दिया गय
र उसके अन्तर्गत खाना देना, पानी देना, घर में बैठ
ा आदि सभी कुछ समझाया गया। नेतागण चिन्तापूर्व
कार्य्य कर रहे थे कि इतने में इन मुखियों के लड़कों तथ
य दो-एक लड़कों के साथ खेलता हुआ राजाराम दिख
ा। ये तीनों के तीनों आग बबूले हो गये और दौड़ते हु

चारे ने भागकर अपने घर में ही साँस ली। गंगा दशहरा व
दिन था, महारानी ने राजाराम के लिए आज कुछ विशे
भोजन बनाने का विचार किया था, इसीलिए घर के आस
पास खेलने की कुछ फुरसत सी राजाराम को मिल गयी थी
राजाराम जाते ही माँ के गले से लिपट गया और सिसक
सिसककर रोने लगा। माँ ने पूछा—किसने मारा, बेटा
राजाराम कुछ न बोला, वह रोता ही रहा। महारानी ने एक
बार बच्चे की ओर स्नेहभरी कातर दृष्टि से देखा और फि
उसकी आँखों से आँसू की बड़ी बड़ी बूँदें टपक पड़ीं। उन्
अपने अंचल से पोंछकर, उसने बच्चे के आँसू पोंछे और कहा—
बेटा, चुप रहो, तुम्हारे लिए आज पूड़ी बनाऊँगी, यहाँ
बैठकर अपने खिलौने के साथ खेलो। पूड़ी का लालच देने से
महारानी ने देखा कि राजाराम सचमुच कुछ चुप हो गया
उसने उसे गोद से उतार कर उसके सामने उसके खिलौने रख
दिये और स्वयं रसोई के काम में लग रही।

राजाराम खिलौनों में ऐसा भूला कि उसे यह न याद रह
गया कि किसी ने उसे मारने को दौड़ाया था, या उसे आज
कोई बढ़िया चीज़ खाने को मिलेगी। उसने अपने मिट्टी के
राजा रानी के लिए एक महल बनाना शुरू कर दिया था।
धीरे धीरे झोपड़ी में महल खड़ा हो गया था, राजा रानी

तक उसको सूझा कि चाँदी की थाल में राजा-रानी को भोजन कराना चाहिए, भोजन का ध्यान आते ही उसने दृष्टि फेरी तो देखा कि मां पूड़ी बना रही है। इस समय राजाराम के आनन्द का कहना ही क्या था, राजा-रानी के खाने के लिए पूड़ी ही तो चाहिए। उसने कहा—मां, एक पूड़ी मुझे दे दे, मैं अपने राजा-रानी को खिलाऊँगा। पूड़ी तैयार हो गई थी, महारानी ने आलू की तरकारी भी बनाई थी, बोली—बेटा आओ हम तुम सब मिलकर खायँ, अपने राजा-रानी को भी ले आओ। राजाराम ने कहा—अम्मा, मेरे राजा रानी तो महल के भीतर खायँगे, वहाँ नहीं लाऊँगा, तू मुझे यहीं दे दे। बच्चे का हठ मानना ही पड़ा, एक पूड़ी राजाराम को दी गई और जब राजा-रानी को वह खिला चुका, तो माँ की गोद में जाकर कूद पड़ा। फिर मां-बेटे ने प्रेम-पूर्वक शेष पूड़ियाँ खायीं, बीच बीच में राजाराम कभी कहता—मां, तू तो सब पूड़ियाँ खाये जाती है, मैं क्या खाऊँगा। और फिर जब मां कहती—अच्छा तू ही खा, तब कहता कि नहीं, नहीं, मां तू भी खा; मै अकेले नहीं खाऊँगा। सूर्य्य देव पश्चिम में डूबते हुए दीन झोपड़ी में स्नेह की यह लीला देख रहे थे।

[१०]

रामकिशोर त्रिवेदी नारायण से अलग होकर आवारगी में अपना समय बिताने लगा था। साल भर से वह प्रयाग से हटने का नाम नहीं लेता था, अपने एक रिश्तेदार के यहाँ पड़ा रहता था। बाप केबूढ़े होने पर भी अभी घर के किसी तरह के काम से उसे मतलब नहीं था। त्रिवेणी तट पर स्नान के लिए वह प्रायः नित्य ही अकेले आया करता

से उसकी आँखें महारानी के ऊपर गड़ गई थीं
से उसे किसी तरह चैन नहीं था। रुपये पैसे, भोग
लास आदि सभी का प्रलोभन उसने दिया, पर महारानी
मन ज़रा भी न डिगा। अन्त में उसने सोचा कि रात को
महारानी सोई रहे तब उसकी झोपड़ी में प्रवेश कर
इच्छा किसी तरह पूरी न हो सकी उसे चोरी से पू
। अँधेरी रात को ९।१० बजे वह कई बार दृढ़ निश्च
के आया, लेकिन झोपड़ी के भीतर जाने की हिम्मत
ी। आज वह अपने घर से यह दृढ़ निश्चय करके चला
हे जेल में जाना पड़े, बदनामी उठाना पड़े, अथवा प्राण न
एँ, परन्तु अपनी लालसा अवश्य पूरी की जायगी।

बारह बजे रात का समय था, चारों ओर अन्धकार छा
ा था। रामकिशोर झोपड़ी के पास खड़ा खड़ा नाना प्रका
तर्क-वितर्क कर रहा था। मदन-पीड़ा से व्याकुल म
ता था—क्या चिन्ता है, आगे बढ़ो, रात्रि में कौन देखता
सर से लाभ उठाओ और अपनी कामना पूरी करो। पर
ा जाने कहाँ से यह आवाज़ आती थी—रुको, यह काम ब
खिम का है। मन कहता था—पक्की दुराचारिणी है, कु
ोलेगी, किन्तु विवेक कहता था कि नहीं वह तुम से घृ
ती है, तुम्हारा सर्व्वनाश कर देगी। अन्त में मन के तूफ

ञ का तिरस्कार कर वह दबे पावों झोपड़ी के दरवाज़े
त आया। कहीं वह जाग न जाय, यह सोच कर धी
ही अरहर के डंठलों को बाँध कर बनाये गये हु
वाज़े को उसने हटाया और साहस के साथ किन्
त चुपके भीतर प्रवेश किया। उसकी तबियत उछल रह
, लेकिन दरवाज़े को भीतर से मज़बूती के साथ बाँध क
उसने एक दियासलाई जलाई तो वहाँ महारानी दिखा
नहीं पड़ी। रामकिशोर का कलेजा बैठ गया। एक दिय
लाई और जलाकर देखा, उसके बर्तन भी वहाँ न थे, राम
शोर के मन ने काँप कर पूछा—महारानी कहाँ गई ?। शी
उत्तर भी उसने दिया—दुराचारिणी है, किसी बदमाश
ाँ। रामकिशोर निराश होकर लौट आया, उसने निश्च
या कि कल शाम ही को यहाँ आ जाऊँगा, क्योंकि निरा
ते हुए भी उसे कुछ आशा हो गई।

रामकिशोर सबेरे त्रिवेणी में स्नान के बहाने फिर आया
झोपड़ी की ओर उछलते हुए हृदय के साथ इस आशा
ा कि अब सबेरे तो आ गई होगी, पर देखा तो वहाँ को
ीं। उदास होकर नहाने चला गया, इस समय उसकी व
ा थी जो मिहनत के बाद रातिब न मिलने पर घोड़े की हो

हृदय में फिर उत्कण्ठा उत्पन्न की और नवीन आशा-शक्ति का संचार होने के कारण बड़ी तेज़ी के साथ वह त्रिवेणी की ओर चला, परन्तु ! आँखें फाड़ फाड़ कर देखने पर भी वहाँ महारानी की मधुर मूर्ति न दिखाई पड़ी। नहाने का काम बेगार सा टाल कर फिर लम्बे पैरों वह झोपड़ी के पास आया, पर वहाँ फिर वही निराशा। रामकिशोर के हृदय ने पूछा—हाय, वह कहीं चली तो नहीं गई ?

रामकिशोर नित्य झोपड़ी के पास से होकर आया करता था, लेकिन सप्ताह के सप्ताह बीत गये और एक दिन भी ऐसा न आया जब महारानी दिखलाई पड़े। थोड़ा थोड़ा करके गाँव के लड़कों ने झोपड़ी गिरा भी दी, इस दृश्य को रामकिशोर चुपचाप देखा करता था, जिस दिन वह टूट टूट कर ज़मीन पर गिर पड़ी उस दिन उसकी आशा का महल भी धराशायी हो गया। उसे निश्चय हो गया कि महारानी कहीं चली गई।

[११]

रामकिशोर महारानी के खो जाने पर किसी दूसरी सुन्दरी की खोज में लगा। एक दिन स्नान का कोई विशेष दिन था। स्त्रियों और पुरुषों की भीड़ त्रिवेणी की ओर जा रही थी। इसी भीड़ में अपने लाभ के लोभ से रामकिशोर भी धीरे धीरे पैदल चला जा रहा था। एकाएक सामने से आने वाला एक ताँगा रुक गया और उस पर बैठे हुए एक आदमी ने उछल कर हर्ष से उसे छाती से लगा लिया। यह आदमी और कोई नहीं, उसका लड़कपन का साथी त्रिवेदीनारायण था।

त्रिवेदीनारायण ने कहा—यह बताओ कि तुम्हारी हमारी जम कर बातें किस तरह हों? तुम नहाने जा रहे हो और मैं लौट रहा हूँ।

रामकिशोर ने तुरन्त ही उत्तर दिया—यह तो कुछ कठिन

त्रिवेदीनारायण ने यह बात स्वीकार कर ली। ताँगे वाले को भाड़ा देकर उसने विदा किया और तुरन्त ही पूछा—हां भाई! यह तो बताओ कि गाड़ी पर साथ छूटने के बाद तुमने क्या क्या किया, कहाँ गये?

राम०—पहले मैं अपना हाल बताऊँ या तुम अपना बताओगे? मैं तुम्हारा हाल जानने के लिए बहुत उत्सुक हूँ, क्योंकि अगली गाड़ी से हवड़े पहुँचने पर तुम्हारी खोज करने के लिए मैंने कोई बात उठा नहीं रक्खी थी। परदेश में मित्र का साथ छूट जाने से जो कष्ट होता है सो तो हुआ ही था, साथ ही, जो कुछ रुपये मैंने जेब में रखे थे उन्हें किसी पाकेटमार ने निकाल लिया था तथा मुझे इस प्रकार सर्वथा असहाय बना कर तुम्हारे वियोग को और भी तीखा बना डाला था।

त्रि०—अच्छी बात है, मैं ही अपना दास्तान शुरू करता हूँ। जब तुम मेरे डब्बे में न आये और गाड़ी चल दी तो मैंने समझा कि तुम किसी न किसी डब्बे में बैठ गए होगे। इसी भय से मैंने गाड़ी की जंजीर भी नहीं खींची। लेकिन बाद को जब तुम्हें सामने खड़े देखा तब अपनी इस भूल के लिए पछताना पड़ा, क्योंकि जब मैं हवड़ा स्टेशन पर उतरा तब तुम्हें लाख ढूँढ़ने पर भी न पा सका। बड़ी देर तक इधर-उधर फिरता रहा, किन्तु जब किसी उपाय

याया और एक गाड़ी वाले से होटलों का पता-ठिकाना पूछ
र उनमें से जो एक मध्य श्रेणी का था उसी में ले चलने का उसे
देश दे दिया। रुपया पास था ही, किसी तरह की तकलीफ़
हीं हुई। अब जो घटना वहाँ घटी उसकी चर्चा करता हूँ।

मेरे होटल के पास एक फ़लाङ्ग की दूरी पर एक तमोलिन
दूकान थी। संध्या समय मैं उधर घूमने निकला तो उसकी
ज़री और चुलबुली जी में घर कर गई। एकाएक तबियत हुई
इसके हाथ से पान के बीड़े खाने चाहिए। दिल में ख़याल
दा होने के साथसाथ ही पैरों ने उसकी ओर चलना शुरू कर
या। तमोलिन निहायत हसीन थी और उतनी ही उदार और
लनसार भी जान पड़ी। उसकी सहृदयता पर लट्टू होकर मैं
दाम के लिए एक रुपया देकर शेष पैसे उसे जमा कर रखने
लिए कह दिया। उसने मेरी इस भलमनसाहत के बदले में
रा सा मुसकरा दिया।



[१२]

त्रिवेदी नारायण ने जेब में से इलायची निकाल कर एक रामकिशोर को दिया और एक अपने मुँह में डालकर फिर कहना शुरू किया:—

उस दिन तो मैं चला आया। लेकिन दूसरे दिन जब तमोलिन वाले मकान ही के तिमंज़िले पर मैंने एक किशोरवयस्का बालिका को लापरवाही के साथ खिलवाड़ करते देखा तो होटल की ओर पैर फेरना मेरे लिए कठिन हो गया। परन्तु, यह तो कठिन रोग था। जहाँ न कोई जान न पहिचान वहाँ अट्टालिका पर विहार करने वाली नवयुवती से मिलने की आशा दुराशामात्र थी। लेकिन मेरी मानसिक विकलता तमोलिन से छिपी नहीं रह सकी। एक दिन जब मैं उसकी दूकान पर जाकर बैठा तब वह पूछ बैठी—बाबू जी! आप उदास काहे दीखते हो?

लेकिन उसने अपना प्रश्न फिर दुहराया। तब मैंने कहा—या बताऊँ, क्या तुम मेरे दुख को दूर कर दोगी जो बार बार छती हो ?

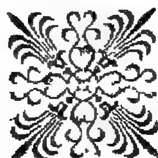
उसने उत्तर दिया—अगर मेरे किये दूर होने लायक होगा, ज़रूर ही दूर कर दूँगी, नहीं तो कुछ कोशिश तो करूँगी ाप परदेसी हैं, आपकी सहायता करना तो मेरा धर्म है।

जी में आया तो कि साफ़ साफ़ कह दूँ, लेकिन फि कोच के मारे कुछ कह न सका। शाम हो गई थी। होटल में ाकर अपने शरमीले स्वभाव को कोसता हुआ बिना कुछ ाये पिये चारपाई पर पड़ रहा। आँखों में नींद न थी। बहुत र तक उसका आवाहन करता रहा। अन्त में हार कर सोचा क अच्छा चलो अपनी इस प्रेम-पात्री के नाम एक कल्पित पत्र ी लिखूँ। चारपाई पर से उठकर बिजली का बटन दबाया मरे में रोशनी हो गई। फिर यह देखने लगा कि उपन्यासों किसी नायक ने अपनी नायिका को किस तरह के प्रेम-पत्र लखे हैं। उन्हीं के ढंग पर मैं भी लिखूँ। मेरी वह सारी रात ागते ही बीती। कितने ही पत्र लिखे और फाड़ डाले। अन्त एक कविता पसन्द आई। उसमें सिर खरोंच खरोंच कर दो क लाइनों में कुछ हेर फेर किया और फिर उसे लिफ़ाफ़े में

त्रिवेदीनारायण इतना कह पाया था कि रामकिशोर ने एकाएक कहा—भाई यह कहानी इतनी दिलचस्प है कि इसे कहीं बैठ कर ही कहना और सुनना अच्छा होगा। इसलिए चलो इस नीम के पेड़ के नीचे हम लोग आनन्द से बात चीत करें—रामकिशोर ने हाथ से इशारा करते हुए कहा।

त्रिवेदीनारायण ने भी रामकिशोर का प्रस्ताव पसन्द किया और निर्दिष्ट स्थान पर पहुँच कर इतमीनानके साथ बैठ जाने के बाद फिर इस प्रकार कहना शुरू कियाः—

तमोलिन ने मेरी उसी चिट्ठी की सहायता से मेरा काम बना दिया। मेरी प्रेमिका मुझे मिल गई। परन्तु वहीं के मेरे एक मक्कार नव-परिचित ने मेरे साथ ऐसा छल किया कि मेरी प्रेयसी से पहली भेंट अन्तिम भेंट भी हो गई।



[१२]

रामकिशोर ने त्रिवेदीनारायण की बात चीत में विराम देखकर तुरन्त ही पूछा—आख़िर यह मक्कार आदमी कहाँ से बीच में कूद पड़ा ? क्या यह भी तुम्हारी प्रेमिका का प्रेमी था ?

त्रिवेदीनारायण ने उत्तर दिया—नहीं ,वह उसी तमोलिन का प्रेमी था और उसे यह सन्देह होने लगा कि तमोलिन मुझे प्यार करती है। इसलिए उसने अपने प्रेम और विश्वास-पात्रता से मुझे वश में कर के इधर-उधर घूमने ले जाना शुरू किया। एक दिन मैंने उससे कहा—भाई साहब मैं जहाज़ पर कभी नहीं चढ़ा हूँ, एक रोज़ चलो इस पर कुछ दूर सैर कर आऊँ। उसने स्वीकार कर लिया। अन्त में एक दिन हम दोनों जहाज़ पर बैठ कर रंगून के रास्ते पर चल पड़े। थोड़ी दूर

कोशिश मैं कर सकता था वह करके अन्त में निराश हो चुपचाप बैठ रहा। लेकिन मेरे दुखों का अन्त यहीं नहीं होने वाला था। मुझे मालूम हुआ कि मेरे पास हज़ार रुपयों के नोटों का जो पुलिन्दा था वह भी ग़ायब हो गया। हाय! अब मैं क्या करता? कौन मेरे रुपयों को मुझे वापिस दिला सकता था?

तुरन्त ही विश्वास हो गया कि वही दुष्ट रुपये भी उठा ले गया। उस अवस्था में मुझे आँखों से आसू बहाने के सिवा और कोई चारा न था। रोता था और अपनी ग़लती के लिए अपने आप को कोसता था। कभी माता पिता की याद आती थी और कभी तुम्हारी। पैसों के न रह जाने पर जी में इतनी घबराहट और बेचैनी होने लगी कि बंगाली खाड़ी की लहरों का दृश्य एक दम से फीका पड़ गया। परन्तु, अब हो भी क्या सकता था? रोने और अफ़सोस करने से तो अवस्था सुधर सकती नहीं थी। किसी तरह जी को कड़ा किया और वीरता के साथ विपत्तियों का सामना करने का संकल्प करके हृदय को विश्राम दिया।

रंगून में जहाज़ से उतरने पर मेरे पास एक टका नहीं था। एक बार तो मन में आया कि पिता जी के पास पत्र लिख-कर रुपया मँगा लूँ और घर लौट जाऊँ; लेकिन फिर सोचा कि यह शरम की बात है, हज़ार रुपये लाकर भी घर को अपनी ...नता का सूचक पत्र लिखना ...

एक पैसे की वास्तविक क़ीमत का अनुभव होने लगा और मैंने सोचा कि पिता जी की गाढ़ी कमाई के हज़ार रुपये इस तरह पानी में डुबो कर मैंने अच्छा नहीं किया।

घर से निकले धीरे धीरे पन्द्रह-सोलह दिन हो चुके थे, लेकिन कुछ तो आलस्य के कारण और कुछ इस उद्देश्य से कि पिता जी को थोड़ा सा मेरी शक्तियों का भी पता चल जाय, मैं क्या कर सकता हूँ, इसका भी थोड़ा परिचय मिल जाय, मैंने अभी तक उन्हें पत्र नहीं लिखा था। बारम्बार यह ख़याल ज़रूर आता था कि माँ रोती होंगी, उन्हे मेरा वियोग असह्य हो रहा होगा। परन्तु यह सोच कर कि मां के कष्ट के बिना पिता जी की आँखों में मेरा असली मूल्य अँकेगा भी नहीं, उस कष्ट को मैं उतना अनुचित नहीं समझता था जितना वह वास्तव में था। ख़ैर, एक रोज़ जब पत्र का न लिखना बेहद बुरा मालूम होने लगा तब एक कार्ड लिख कर डाकख़ाने में छोड़ने के लिए जेब में रख लिया। इस कार्ड ने जो कुछ करतूत की उसका रोना मुझे आज तक है। इसने मेरे जीवन को अत्यन्त विषाद-पूर्ण बना दिया, रामकिशोर !

इतना कह कर त्रिवेदीनारायण ने एक ठण्डी साँस भरी और वेदना-व्याकुल नेत्रों से रामकिशोर की ओर देखा।

ुचा और तुम्हारे घर गया तो मुझे महीने दो महीने के बा
यही मालूम हुआ कि तुम्हारे पास से कोई चिट्ठी न
ई है।

हां भाई, यही तो बात है। उस अभागे पत्र ने मेरे प
ई की जेब में पड़े रह कर मेरी माता की जान ली और पि
संसार से विरक्त बनाया और मेरे बने बनाये घर को तबा
र दिया।

लेकिन भाई साहब! तुम्हारी मां का देहान्त तो छः मही
द हुआ। तब तक भी अगर तुम्हारे हाथ की एक लकीर मि
ा होती तो वे धीरज न खोतीं। अन्त में उन्हें यह विश्वा
गया कि तुम जीवित नहीं हो। मैं जब जब उनके पास जा
तब वे बिलख बिलख कर रोतीं और पूछतीं कि मेरे भ
कहां छोड़ आये रामू? मैं हमेशा उनसे सच-सच बातें बतात
किन वे मेरे ऊपर विश्वास न करतीं और कहतीं कि नह
ा, मुझे बहलाओ मत, मेरे भैया का कलेजा इतना निष्ठुर न
कि इतने दिन तक वह मुझे अपने कुशल-क्षेम की खबर
अवश्य ही अब वह अच्छी तरह नहीं है, उसकी जान
छ न कुछ ख़तरा ज़रूर हो गया है। भाई, अब सच बातें ब
कभी कभी तो वे मेरे ही ऊपर सन्देह करने लगतीं थीं औ
यद सोचतीं थीं कि जो हज़ार रुपया लेकर तुम घर

दिया। इस प्रकार के सन्देहों से मैं बहुत दुखी होता था। उनका शमन करने का कोई उपाय न देख तथा माता के हृदय की प्रकृति का अनुमान करके मैं चुप रह जाता था और बाद को मैंने तुम्हारे घर जाना भी छोड़ दिया। ख़ैर यह तो बताओ कि तुमने दूसरा कोई पत्र क्यों नहीं लिखा?



[१४]

त्रिवेदी नारायण ने आँखों में आँसू भर कर कहा—दूस
ई पत्र मैंने क्यों नहीं लिखा—इसकी तह में भी एक गह
ा है। जब मुझे अपने पत्र के उत्तर की प्रतीक्षा करते कर
ाभग एक महीना हो गया और इसके कारण मुझे काप
ांनी का सामना करना पड़ा तब मैं बिलकुल झुँझला गया
ो पिता जी पर तो क्रोध आया ही, साथ ही माता जी प
ा रोष नहीं हुआ। अपने जिस महत्व का भाव मैं इन लोगों
य-पटल पर अंकित करना चाहता था पत्रोत्तर न देना उसक
ल उपेक्षा थी और इस उपेक्षा से मैं ऐसा तिलमिला उठा
दूसरा पत्र तब तक न लिखने का निश्चय कर लिया जब त
ा जी के पास लौटालने के लिए मैं हज़ार रुपये कम
लूँ। यह एक ऐसा निश्चय था जिसने मुझे कई वर्षों त
म में लगा रक्खा। बीच-बीच में मैं पिता-माता की उपेक्ष
कुढ़ता था और प्रायः यह सोचता था कि शायद क्रोध

...ा लिया है। बहुत परिश्रम कर के इधर-उधर कुछ का...
...ता और जो कुछ मज़दूरी मिलती उसी में से थो...
...ड़ा रखता जाता था। किसी प्रकार एक हज़ार रुपये ...
... गये और रुपयों के साथ साथ फटकार से भरी हु...
...क चिट्ठी पिता जी के पास भेजने का आनन्द लूटने ...
...मय आ गया। किन्तु शीघ्र ही ऐसा करके मैंने देखा ...
...ा यह वार भी ख़ाली गया। कहां तो मैं सोच रहा था ...
...ता जी का लज्जापूर्ण पत्र आता होगा और कहाँ वापिस आ...
...ी रुपये तथा वह पत्र। अब मैं बहुत हैरान हुआ। रुप...
...लौटने की बात तो समझ में आ सकती थी, क्योंकि पिता ज...
...ा लौटा सकते थे, लेकिन इतने दिनों के बाद भी जाकर प...
...स्वीकार किया जाय, यह असम्भव ज्ञान पड़ा। अनिष्ट व...
...शंका से मेरे हृदय की व्याकुलता बढ़ चली। जिन पिता जी ...
...ार खाये बैठा था उन्हीं के दर्शनों के लिए जी तड़पने लगा...
...काल ही मैंने निश्चय किया कि अब घर वापिस चलूँ—यह...
...क कहने के बाद न जाने किन स्मृतियों से त्रिवेदी नाराय...
... आँखें डबडबा आईं और उसका गला रुँध गया। थोड़ी दे...
...लिए वह बोलने में असमर्थ हो गया। लेकिन रामकिशोर व...
...से क्या मतलब ? उसने कहा—हां, तो आगे बताओ, उ...
...ीलिन या लड़की से तुम्हारी फिर भेंट हुई या नहीं ?

[१५]

त्रिवेदीनारायण ने थोड़ी देर बाद फिर अपना कथन शुरू किया—रंगून से कलकत्ते पहुँचा तो मैंने सोचा कि तमोलिन से तथा उस नीच मनुष्य से, जिसने मुझे जहाज़ पर धोखा दिया था, ज़रा भेंट कर लूँ। एक गाड़ी किराये की करके शीघ्र ही मैं तमोलिन के मकान के सामने पहुँच गया। तमोलिन तब भी पान के बीड़े लगा रही थी, उसने देखते ही मुसकरा दिया। सामान उतरवा कर मैंने उसी की कोठरी में रखवा दिया और किराया देकर गाड़ीवाले को विदा किया।

तमोलिन ने मेरा बड़ा आदर-सत्कार किया। जलपान का प्रबन्ध करा के बढ़िया पान के बीड़े लगाये और फिर बात करने लगी। सबसे पहिले उसने मेरे धोखेबाज़ साथी की मौत का सन्देश सुनाया। उसको भी कुछ कड़ी बातें कहने के लिए मैंने मज़मून बाँध लिया था। इसलिए पहले तो कुछ बुरा मालूम हुआ। लेकिन फिर यह सोचकर कि मर गया सो भी अच्छा ही हुआ, सन्तोष कर लिया। मैंने पूछा आखिर वह कैसे

तमोलिन हँस कर बोली—बाबू जी ! मरने में भी कहीं दे
ाती है, तीन चार दिन ज्वर आया, मर गया। हां, आप
: हज़ार रुपये जो ठग लिये थे वे मेरे पास हैं। उन्हें आप
जिएगा। वह बड़ा पाजी आदमी था। आप उसकी मीठ
ों में आ गये थे। मैं आपको उससे सावधान करन
हती थी, परन्तु मुझे ऐसा करने का कोई मौक़ा मिलने
ले ही आप उसके जाल में फँस गये। कुशल यह हुई f
ने आप की जान का कोई ख़तरा नहीं किया। बड़ा ह
ती और बदमाश आदमी था, उसके मारे तो मेरी नाक
था।

मैंने कहा—एक बात तो बताओ तमोलिन, वह एका-ए
ाज़ पर से कैसे ग़ायब हो गया ?

तमोलिन ने उत्तर दिया—ग़ायब वह हो सकता था
के लिए जहाज़ पर से कूद पड़ना कोई कठिन बात नह
। लेकिन शीघ्र ही उसे कोई जहाज़ वापिस आता दिखा
ई पड़ा। इसलिए वह बहुत दूर तक उस जहाज़ पर जाक
रे पर चढ़ा। वह बड़ा ही अजीब आदमी था।

मैंने पूछा—और ये रुपये तुम्हें कहां मिल गये।

तमोलिन ने उत्तर दिया—बाबू जी, रुपये-पैसे लाकर व
ह ही तो देता था। वह आप तकलीफ़ें झेलकर जो कु

किसी दूसरे से न बोलूँ। मुझे दूकान बन्द कर देने के लिए बहुत कहा करता था। लेकिन मैंने दृढ़ रह कर कह दिया कि दूकान तो मैं नहीं बन्द कर सकती। आप से मुझे स्नेह से साथ बातचीत करते देख कर वह कुढ़ गया था और इसी-लिए उसने आप के साथ ऐसा किया।

इस उत्सुकता के शान्त होने पर मैंने पूछा—अच्छा वह लड़की तो अपने ससुराल गई होगी।

तमोलिन ने जवाब दिया—उसका हाल कुछ न पूछिए। उस बेचारी के ऊपर तो दुख का पहाड़ ही टूट पड़ा। पाप का जो फल प्रायः स्त्रियों को मिल जाया करता है वह उसे भी मिल गया। शायद उसकी ऐसी हालत से ही घबराकर पंडित जी ने यह मकान बदल दिया, फिर क्या हुआ मुझे बिलकुल नहीं मालुम।

भाई रामकिशोर! इस समाचार ने मुझे अधमरा सा कर दिया। किन्तु तमोलिन को कोई बहुत अफ़सोस नहीं था, उसके लिए तो यह जैसे एक साधारण सी बात हो गई हो।

मैंने तमोलिन से कहा—क्या किसी तरह उससे मेरी भेंट हो सकती है?

तमोलिन बोली—बाबू जी, बिलकुल असम्भव बात है।

उनके घरवाले यहां होंगे ही क्यों ? फिर लड़की तो
ने किस घाट का पानी पी रही होगी।

इसके बाद मैं चुप रहा। इस समाचार ने मेरा वहां अधि
तक ठहरना कठिन कर दिया। शीघ्र ही तमोलिन से वि
कर मैं स्टेशन पहुँचा। वहां से बनारस को रवाना हुआ
ां मालूम हुआ कि मेरा सोने का घर मिट्टी में मिल गया
फूटकर रोया। लेकिन अब रोना व्यर्थ था। तुम्हें बहु
ाशा, लेकिन तुम्हारा भी पता न चला। तुम्हारी ससुरा
भी पूछा। उन लोगों ने कुछ ठिकाना बताया, परन्तु मे
ब कोशिश करने पर भी तुम नहीं मिल सके। सब तरह
ाश होकर अपनी ससुराल में गया। वहां लोगों ने बताया
ड़की भी मरी, लड़की की मां भी मरी, बाप भी मरे। अप
मुँह लेकर वहां से भी वापिस आया। तब से बनारस
हूँ। लड़कियों के मां बाप नहीं मानते हैं, इसलिए इस सा
दी भी करने वाला हूँ।

यह सब कह कर त्रिवेदीनारायण ने अपनी कहानी समा
और रामकिशोर से अपनी बातें सुनाने का अनुरो
या।



[१६]

मेरी कहानी तो तुम सुन चुके—रामकिशोर ने उत्त
्या।

त्रिवेदी नारायण ने कहा—बहाने न करो, यह बताओ कि
ुम घर तक कैसे पहुँचे ? पैसा तो पास था नहीं।

रामकिशोर ने कहा—यह सब कुछ न पूछो। बाद को यह
ाम उतना कठिन नहीं रह गया जितना मैंने शुरू में सोच
ा। दो तीन दिन तो मैंने ख़ूब तकलीफ़ उठाई और अधि
ांश में तुमसे भेंट हो जाने के लिए। लेकिन जब यह विश्वा
ो गया कि तुम्हारा मिलना अब असम्भव है तब हबड़
्टेशन तक पहुँच कर भी मैं तुरन्त ही दूसरी गाड़ी से बिन
टिकट ही वापिस आया। यहां बनारस के स्टेशन पर टिक
ांगा गया तो मैंने कह दिया कि खो गया। आप मेरा को
ीलाम करके टिकट वसूल कर लीजिए। अन्त में एक परि
चित व्यक्ति मिल गये। उनकी कृपा से मैं इस झंझट से छूटा

त्रिवेदीनारायण ने कहा—ख़ैर, मालूम हो गया कि तु
क़ ही बच आये। मैं ही फँसा तो दलदल में फँस गया।

रामकिशोर ने तुरन्त ही सिर हिलाते तथा एक विचि
ट्र-विक्षेप करते हुए मुसकराकर कहा—हज़रत, आपने मज़
तो लूटा। मैं तो बिलकुल बैरंग वापिस आया। हां, वहां
र मैंने घर पर अच्छी तरह निकाल ली। शीघ्र ही पिता
वेवाह कर दिया, पढ़ाई-लिखाई भी छूट गई। तब से मौ
है। आराम से दिन कटते हैं। मैंने तो सोच लिया है f
ा जी रुपया कमाने के लिए संसार में आये हैं और
या हूँ आनन्द करने के लिए।

त्रि०—अच्छा, मेम साहब का क्या हाल-चाल है ?

रा०—अच्छा हाल है, शौक़ीन तबिअत हैं, कभी बाँसु
ाती हैं, कभी हारमोनियम, स्वर तो ऐसा है जैसे कोय
।

त्रि०—इतनी तारीफ़ क्यों कर रहे हो ? दिखाना-बिखान
है ही नहीं।

रा०—अफ़सोस मित्र ! आजकल वह यहीं मायके में
ा बस नहीं है, नहीं तो तुमसे क्या छिपाना था।

त्रि०—अच्छा तो आगे का क्या प्रोग्राम है। चलो पह
ा तो लो।

ी· सुन्दरियों पर गहरी दृष्टि डालते हुए दुचित्ते ढंग स
ाकिशोर ने कहा—अभी इलाहाबाद में के रोज़ ठहरोगे ?

त्रि०—ठहरने का विचार तो बिलकुल नहीं है। आज ह
ारस लौट जाना चाहता हूँ। स्नान करने के लिए ज़रा रु
ा, नहीं तो घर पर बहुत काम है।

रा०—काम क्या है ? वहां कौन तुम्हारे लिए थाल परोस
ा है ?

त्रि०—यह सही है कि मैं स्त्री-विहीन हूँ, लेकिन मेरी बूढ़
ाथवा चाची जो अपने मायके में चली गई थीं घर पर रह
ी हैं और मेरी चचेरी बहिन के गाँव की एक अनाथ ब्राह्म
की भी मेरी आश्रिता है।

रामकिशोर ने मज़ाक़ के ढंग से कहा—क्या उसीसे विवा
ने की इच्छा है ? बहुत ख़ूबसूरत होगी। तब तो भा
ही जाओ।

अजी नहीं, वह तो मुझे मामा कहती है, उसकी शा
ीं कर दूँगा, त्रिवेदीनारायण ने तुरन्त ही कहा।

इसी तरह बातें करते हुए दोनों मित्र उद्दिष्ट स्थान प
च गये। रामकिशोर ने स्नान किया। फिर दोनों लौटे।

रामकिशोर—मित्रवर! अब बनारस ही में मिलूँगा, कल ठहरते तो मैं ज़रूर ही मिलता। आज तो ज़रूरी काम ले लिया है। यह क्या जानता था कि तुमसे भेंट हो जायगी।

बाँध के आगे दोनों व्यक्ति एक दूसरे से विदा हो कर अलग हो गये।



[१७]

संध्या समय त्रिवेदीनारायण त्रिवेणी के बाँध की ओर घूमने के लिए गये। वेषभूषा से अमीर आदमी समझ कर एक मल्लाह ने कहा—हुज़ूर कहिए तो नाव पर आप को सैर कराऊं। वसन्त ऋतु थी। धीमी-धीमी हवा बह रही थी। बात त्रिवेदीनारायण को जँच गई। नाव पर बैठाकर मल्लाह किले के पास यमुना के तट से त्रिवेणी की ओर ले चला। थोड़ी देर में चाँदनी रात छिटिक आई, चन्द्रमा और ताराओं का यमुना की तरंगों में झलमलाता हुआ प्रतिबिम्ब अनूठी शोभा की सृष्टि करने लगा। उन दिनों त्रिवेणी का संगम अरइल के और आगे चला गया था। परन्तु इस अपूर्व शोभा के रस का पान करते हुए त्रिवेदीनारायण अपने आप को भूल गये और

...लाह उन्हें और आगे लिये जाता तो उनको कुछ भी ख़या...
...होता। परन्तु एकाएक पास ही से रोने-चिल्लाने की आवा...
...ई और उनकी आनन्द-समाधि टूट गई। बहुत अधिक बेचैन...
...अनुभव करते हुए उन्होंने मल्लाह से कहा—क्यों जी य...
...की आवाज़ कहां से आ रही है।

यह तो संसार है, सरकार! कोई रोता है, कोई गाता ...
...के लिए आप कहां तक चिन्तित होंगे—मल्लाह ने उत्त...
...रा।

त्रिवेदी नारायण ने कहा—नहीं, नहीं, इस रोने में ...
...णा है, मल्लाह! मेरा हृदय अधीर हो रहा है। इसी साम...
...गांव से यह आवाज़ आ रही है। यह कौनसा गाँ...
...?

इस गांव का नाम अरइल है बाबू साहब!

क्या कहा? अरइल? अरइल तक आ गये! मैं तो सम...
...ा था कि अभी अरइल बहुत दूर होगा। अच्छा तो क...
...व खड़ी करो मल्लाह! मैं इस रोनेवाले से भेंट करने ...
...ए उत्सुक हूँ, मल्लाह ने कहा—बहुत अच्छा सरकार!

———:o:———

[१८]

किनारे उतर कर त्रिवेदी नारायण ने मल्लाह को नाव
थ छोड़ दिया और स्वयं गाँव की ओर बढ़े। थोड़ी ही दू
े पर उन्हें वह आवाज़ बहुत निकट से आती जान पड़ी
थ ही यह निश्चय हो गया कि सामने के झोपड़े में एक स्त्र
रही है। स्त्री का रोना समझ कर वे कुछ संकोच में प
, किन्तु मौक़े से एक वृद्धा स्त्री झोपड़े में से निकली।

त्रिवेदी नारायण ने वृद्धा से पूछा—माता, यह कैसी बा
? यह स्त्री इतना क्यों रो रही है ?

बाबू जी ! मैंने बहुत जानने की कोशिश की, लेकिन व
त के सिवा कुछ और कहती ही सुनती नहीं—वृद्धा ने उत्त
ा।

तुम्हें जाने की जल्दी तो नहीं है, कुछ देर मेरे साथ ठह
कती हो ? त्रिवेदीनारायण ने पूछा।

आप चलिए बाबू जी, जो चुप हो जाय तो बहुत अच्छा

त्रिवेदीनारायण ने कहा—मेरे जाने में एतराज़ की को
त तो नहीं है, बुढ़ी !

खाती-पीती है, आप ही से दूर भागेगी तो कैसे का
गा।

त्रि०—क्या यह भिखारिनी है ?

बूढ़ी—हां, बाबू जी, इसी तरह तो पेट पालती है। ह
ों से भी जो कुछ बन पड़ता है वह सहायता कर देती हैं
भलेमानुस है।

त्रि०—आख़िर कुछ अन्दाज़ भी नहीं मिला कि यह क्यों
ी है ?

बू०—बाबू जी ! इसी तरह यह महीने पन्द्रह दिन में ए
रो लेती है, हम सब को यह पता नहीं चलता कि व
ां रोती है, न चुप कराने से चुप होती है, और न रोने क
ई कारण बताती है।

त्रि०—इसकी यह आदत कितने दिन से है ?

बू०—जब से इस गाँव में आई है तभी से यह आदत
ू जी !

त्रि०—कितने दिन से इस गाँव में है ?

बू०—कोई साल भर के लगभग हो गया होगा।

त्रिवेदीनारायण को इस रोने वाली स्त्री के जीवन में कु
स्य जान पड़ा। उत्सुक होकर उन्होंने कहा—माता आ
से उससे मैं उससे कुछ बातें करूँगा।

[१६]

स्त्री के रोने का स्वर अब आप ही आप कुछ मन्द पड़ गया था।

बूढ़ी ने स्त्री को हिला-डुलाकर कहा—चुप हो जाओ, देखो बाबू जी तुमसे क्या पूछते हैं।

बूढ़ी की आवाज़ शायद स्त्री के कानों में पड़ गई, क्योंकि उसने तुरन्त ही रोना बन्द करके आँचल के छोर से आँसुओं को पोंछना शुरू किया। त्रिवेदीनारायण ने उसी समय पूछा—देवी, तुम इतना क्यों रो रही हो?

स्त्री ने कुछ उत्तर न दिया। ऐसा जान पड़ा जैसे उसके रोने का प्रवाह बहुत अधिक वेग से फिर उमड़ने वाला हो और उसने उसे संयत करने का भरसक प्रयत्न किया हो। वह कुछ बोली नहीं, बोल सकती थी या नहीं, यह कह नहीं

त्रिवेदीनारायण ने अपने प्रश्न को दुहराया। इस बार स्त्री
क्षीण स्वर में कहा—महाशय ! आप मेरे कष्टों का हाल पूछ-
: क्या करेंगे ? मेरा तो यह जीवन भर का रोना है।

त्रि०—फिर भी मनुष्य ही मनुष्य की सहायता करता है।
दि तुम्हारे जीवन में कुछ अधिक सुविधाएँ बढ़ाई जा सकेंगी
मैं कुछ न कुछ उद्योग करूँगा।

स्त्री ने आँखों के कोनों में छिपे-से बैठे हुए आँसुओं को
छकर एक बार बड़े ध्यान से त्रिवेदीनारायण की ओर देखा
सकी दृष्टि से कुछ आश्चर्य और कुछ अविश्वास का भाव
कट हुआ। त्रिवेदीनारायण उसकी एकाग्रदृष्टि से कुछ सहम
ऐ। उन्हें आप ही आप यह अनुभव हुआ कि यह स्त्री किसी
साधारण कुल की नहीं है, केवल दुर्भाग्य से इसकी यह
वस्था है। वे और भी उत्सुक हो गये।

स्त्री ने क्षण भर के बाद ही अपनी दृष्टि दूसरी ओर कर
ी। त्रिवेदीनारायण ने फिर साहस करके कहा—देवी, यदि
तुम्हारे कष्टों को जान जाऊँगा तो इससे तुमको कोई हानि
हीं होगी, यद्यपि यह भी नहीं कह सकता हूँ कि ऐसा कर
े तुम्हें कोई लाभ हो सकेगा या नहीं। जो हो मेरी उत्कण्ठा
अवश्य ही शान्त हो जायगी। यदि उचित समझो तो कहो।

[२०]

सहानुभूति और दया के स्वर में एक ईश्वरीय बल रह
उसने स्त्री पर भी प्रभाव डाला और अब वह त्रिवेदी
ायण से बोली—महाशय मैं अपने कर्मों को रोती हूँ
बहुत बड़े कुल में मेरा जन्म हुआ और उससे भी ब
में विवाह। परन्तु मेरे दुर्भाग्य ने मेरी यह दशा क
ली है कि साधारण से साधारण व्यक्ति मेरा अपमान क
हैं। अपमान की चोट से विकल होकर मैं रोती हूँ औ
भर रो लेने के बाद आप ही आप कुछ सांत्वना
ती हूँ।

स्त्री को ईश्वर ने अद्भुत रूप दिया था। जिस समय व
कह रही थी उस समय उसका यह रूप और भी मनोहर
था। जिन्हें प्रकृति ने सुन्दर बना रखा है उनकी सुन्दरता
ड़ी में दुःख और चिन्ता भी गोटे बन कर रह जाती हैं। इ

...। उन्होंने फिर पूछा—देवी, क्या मैं यह जान सकता ... तुम्हारा जन्मस्थान कहाँ है ?

त्रिवेदीनारायण के स्वर में और भी अधिक सहानुभू... प्रभाव स्पष्ट था।

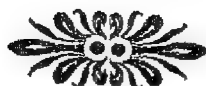
स्त्री ने उत्तर दिया—मेरे पिता लखनऊ के रहने वाले ... र कलकत्ते में एक बहुत बड़े पद पर नौकर थे। मैं उन... कमात्र कन्या हूँ।

यह कह कर स्त्री रुक गई। जान पड़ा जैसे कुछ और कह... ती थी, लेकिन कुछ सोचकर चुप रह गई। थोड़ी देर ... वह फिर बोली—मेरे मातापिता का स्वर्गवास हो गय... स भी इस लोक में न रहीं; पति क्या जाने कहाँ परदेश ... गये और फिर लौट कर न आये। ससुर साधु हो गये ... प्रकार मायका और ससुर दोनों को तबाह करके मैं अप... वन इस प्रकार बिता रही हूँ।

त्रिवेदीनारायण की आश्चर्य-मिश्रित उत्कण्ठा का पार ... ा। शीघ्र ही पूरा तथ्य जान लेनेकी इच्छा से उन्होंने पूछा-... ी, क्या मैं जान सकता हूँ कि तुम्हारा विवाह कहाँ हु... ? किन्तु तुम्हारी और मेरी कथा में इतना सादृश्य है ... तुम्हें अपना परिचय देकर इस प्रश्न का उत्तर चाह... मैं बनारस के पं० सदानन्द त्रिपाठी का एकमात्र लड़...

अपने एक मित्र के साथ कलकत्ते भाग गया था, वहाँ से अनेक वर्षों बाद स्वदेश को लौटा तो देखा कि घर और ससुराल दोनों मिट्टी में मिल गये। ससुर जी और माँ के बारे में सुना कि वे इस लोक में नहीं हैं तथा पिता जी साधु हो गये, आदि आदि।

त्रिवेदीनारायण का यह कथन सुनने के बाद स्त्री का सिर चक्कर खाने लगा और अपने को सम्हालने में असमर्थ होकर वह मूर्च्छित हो गई।



संदेह का कीड़ा

धीरे ग्यारह वर्ष बीत गये। एक दिन पं० त्रिवेदीनारायण के यहाँ भीख माँगता हुआ कोई सोलह वर्ष की अवस्था का एक भिखारी बालक आया। था तो

र्ता, और कमर में एक मैला-कुचैला पाजामा था। पंडित
पने बँगले में काम कर रहे थे, चपरासी का ध्यान कहीं औ
, इतने में बिना इत्तिला कराये ही उसने कमरे के अन्दर प्रवे
या और वह सलाम करके एक कुर्सी पर बैठ गया। पंडित जी
छ आश्चर्य से पूछा, तुम कौन? उत्तर मिला—हुजूर, मैं प
खारी हूँ, चाहता हूँ कि आप मेरी सहायता करें। पंडि
ने रूखे स्वर से उत्तर दिया—मैं भिखारियों की सहाय
हीं करता, यह मेरे सिद्धान्त के विरुद्ध है, जाओ काम ढूँढ़
र कमाओ खाओ। पंडित जी यह कहकर अपने काम
ना ही चाहते थे कि भिखारी ने फिर कहा—हुजूर, मुझे का
ने से एतराज़ नहीं, आप काम दिलाइये। पंडित जी
नो किताब पर ही दृष्टि किये हुए कहा—जाओ अपने मुस
ान भाइयों से कहो, हम तो हिन्दुओं ही की पूरी पू
ता नहीं रख सकते!

भिखारी—हुजूर, मुसलमान भाइयों के यहाँ हो आय
अपने-अपने काम में लगे हैं, कोई नहीं सुनता। अब आ
पास हाज़िर हुआ हूँ।

पंडित जी—तो तुर्की टोपी उतारकर आर्य्य-समाज
हो जाओ, हम तुम्हें काम दिला देंगे।

यह कह कर वह शीघ्रता के साथ कमरे के बाहर
ा और बड़ी देर तक बँगले के कम्पाउण्ड में घूमता रहा
ु देर के बाद वह पेड़ के नीचे बैठ गया और एक किता
लकर पढ़ने लगा। इतने ही में ज़नाने मकान में से ए
दूरिन ने आकर अचानक पूछा—क्या तुम भिखारी
ने कहा, हाँ। मज़दूरिन ने कहा, चलो मालिकिन
म तुम्हें भोजन देने का है। वह बोला, लेकिन मैं
लमान हूँ। मज़दूरिन ने कहा, क्या समझते हो कि तु
के में बैठाकर खिलावेंगे, अलग खा लेना।

भरपेट भोजन कर लेने के बाद भिखारी को आज्ञा मि
बरामदे में सोओ। भाग्य की बात कि दो तीन घण्टे
यं पंडित जी ने आकर कहा, अच्छा हमीं ने तुम्हें नौ
लिया, तुम्हें चपरासी का काम करना होगा। भिखा
कहा, लेकिन हुजूर अपना धरम छोड़ने को मुझसे
हियेगा। पंडित जी ने हँस करकहा—अजी, हम ज़बरदस
दू थोड़े ही बनाते हैं।

—:o:—

[२२]

शाम के वक्त भिखारी को एक चारपाई और बिस्तर दिये गये, खाने को पूड़ी मिली। पंडित जी घूमने कहीं चले गये थे, वह बरामदे में बैठा हुआ अँग्रेज़ी भाषा की एक किताब देख रहा था। इतने ही में किवाड़ की आड़ में उसे एक सुन्दरी स्त्री, जिसकी अवस्था कोई ३५ वर्ष की होगी, दिखलाई पड़ी। स्त्री ने पूछा—चपरासी, तुम्हारा नाम क्या है? चपरासी ने उत्तर दिया—अलीहसन। स्त्री ने फिर पूछा—तुम्हारे माँ बाप हैं, या

होतो ? मुझे तो यह भी नहीं मालूम कि मेरे कोई बाप था या नहीं, माँ की भी मुझे बिलकुल याद नहीं। बस, इतना मुझे याद है कि एक दिन शाम को मेरी माँ बर्त्तन लेकर नदी में माँजने गई, उसके साथ मैं भी गया, उसने नहा लेने के बाद मुझे नहलाना शुरू किया। मेरा पैर कुछ गहरे चला गया, मैं डूबने लगा, जल्दी और घबराहट में माँ के पैर भी गहरे चले गये, फिर मुझे नहीं मालूम कि माँ क्या हुई और मैं किस तरह बचा। स्त्री भीतर चली गई और पाँच मिनट में लौट कर अलीहसन से बोली—लो अपनी सब पोशाक उतारकर अलग कर दो, और यह चपरासी की पोशाक पहिन लो। 'जो हुकुम' कहकर अलीहसन ने अपनी टोपी और मैला कुर्त्ता उतार दिया। इसके बाद स्त्री चली गई, पोशाक पहिन चुकने पर लालटेन के सामने अलीहसन फिर किताब देखने लगा।

—:o:—

[२३]

श्री त्रिवेदीनारायण के कोई सन्तान नहीं थी, एक लड़की हुई थी, लेकिन दो-तीन वर्ष जीकर मर गई। परन्तु इसके कारण वे उदास नही दीखते थे। वे कहा करते थे कि हिन्दू जाति के समस्त अनाथ बालकों को मैं अपना ही बालक समझता हूँ। उन्हें प्रसन्न देखता हूँ तो मेरी छाती फूल जाती है, उन्हे कुम्हलाये फूल की तरह देखता हूँ तो मेरा कलेजा बैठ जाता है। शुद्धि के वे बड़े पक्षपाती थे, यदि कोई मुसल्मान था

नों स्वर्ग मिल गया। इस सम्बन्ध में उनका उत्साह इतन
धिक था कि लोग उनके स्वभाव में इसे दुर्बलता समझ
थे।

पंडित जी टहलकर आठ बजे आये, भोजन करके चार
ई पर लेट रहे। वही स्त्री जिसकी चर्चा हम कर आये
के पास आकर एक कुर्सी पर बैठ गई। पंडित जी
ा—क्यों, अलीहसन तो बहुत सीधा जान पड़ता है।
कहा—सीधा तो है ही, काम में होशियार भी है। कितन
ल्छा होता यदि यह हिन्दू होता। पंडित जी ने कहा—ख़ै
ीब आदमी है, बेचारे की इसी बहाने सहायता हो जायगी
बोली—क्यों, जब तुमने कहा था कि हिन्दू होगे या नहीं
सने क्या उत्तर दिया था? पंडित जी ने उत्तर दिय
सने कहा मैं रोटी के लिए अपना धर्म्म नहीं छोड़ूँगा। य
ाकर स्त्री ने एक ठण्डी साँस भरी, परन्तु पता नहीं पंडि
ने इस ओर ध्यान दिया या नहीं।

पाठक यह समझ ही गये होंगे कि यह स्त्री और को
ीं, त्रिवेदीनारायण की धर्म्मपत्नी थी। दूसरे दिन ज
डत जी घूमने चले गये तब वह फिर आकर किवाड़ क
ड़ मे खड़ी हुई। उसने पूछा—चपरासी, तुम्हारी तबिय
ाँ लग तो रही है न? अलीहसन ने उत्तर दिया—हुज़ू

स्त्री अलीहसन! हमारे यहाँ आने के पहले तुम क
ज़के यहाँ थे?

अलीहसन—हुज़ूर! एक मौलवी साहब के यहाँ था
ोंने लड़कपन से ही मेरी परवरिश की थी, लेकिन वे मुझ
म बहुत लेते थे और मुझे कोई किताब लिये देखते थे,
ने दौड़ते थे। मुझे किताब पढ़ने का बड़ा हौसला है, इस
मैं उनके यहाँ से भाग आया, तब से घर घर भीख माँ
ही पेट पालता रहा, अब हुजूर ने मेहरबानी की है।

स्त्री—तुम्हें हमारे यहाँ कोई तकलीफ़ न होगी। हाँ, हम
ाँ रहकर तुम किसी तरह का मांस नहीं खा सकते, ह
ा सफ़ाई बहुत पसन्द करते हैं, इसलिए तुम्हें रोज़ नहा
गा, तुम्हारे पहिनने के कपड़ों का कल प्रबन्ध करा दि
गा। अगर सफ़ाई में कमी हुई, तो तुम निकाल दि
ओगे। क्योंकि, तुम्हारे मालिक गन्दगी बहुत नापसन्द कर
। तुम्हारी ग़रीबी देखकर मैंने तुम्हारी सिफ़ारिश कर
हें नौकर रखाया है, इस बात को मत भूलना।

स्त्री की यह बात सुनकर अलीहसन ने कहा—जैसा हुकु
कार का।

पंडित जी के आने का समय निकट जान स्त्री भीतर च
। अलीहसन लालटेन के सामने किताब देखने लगा।

[२४]

अलीहसन को मालिक के यहाँ से एक जोड़ा धोती, एक जोड़ा कुर्ता और कोट, एक टोपी और एक जोड़ा बढ़िया देशी जूता मिला। मालकिन की आज्ञा हुई कि उसे अलग भोजन बनाने की ज़रूरत नहीं, जैसे रसोई के कहार को खाना मिलता है वैसे उसके लिए भी बाहर भेज दिया जाया करे। अलीहसन को इस प्रबन्ध से बहुत सुभीता था, इस लिए वह इससे बहुत प्रसन्न हुआ।

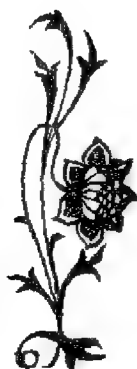
गये। अलीहसन बहुत खुश हुआ, क्योंकि यद्यपि वे उस पर बड़ी कृपा-दृष्टि रखते थे, तथापि वह उनसे बहुत डरता था। घर में और कोई ऐसा नहीं था, जिसकी उपस्थिति में उसे कुछ घबराहट मालूम हो, मालकिन से तो वह इतना हिल गया था कि यदि वह उनसे कोई अटपटी बात भी कह देता तो वे बुरा नहीं मानती थीं। जिस दिन पंडित जी गये, उसी दिन की शाम की बात है कि भीतर औरतें गाना गा रही थीं। अली-हसन बरामदे में बैठा हुआ उनके स्वर की मधुरिमा का रस-पान कर रहा था। एकाएक वह बोल उठा—हारमोनियम ठीक नहीं बज रहा है। जिस कमरे की किवाड़ की आड़ में खड़ी होकर कुसुम अलीहसन से बातचीत किया करती थी, उसी में यह संगीत हो रहा था। मालकिन ने अलीहसन की यह बात सुन ली और कहा—क्यों, क्या कह रहे हो चपरासी? अली-हसन ने लज्जित होकर कहा—कुछ नहीं हुजूर। मालकिन बोलीं—नहीं तुमने कहा है कि हारमोनियम ठीक नहीं बज रहा है, आओ तुम्हीं को बजाना होगा। कमरे में एक बूढ़ी स्त्री भी बैठी थी, उसने कहा—कुसुम, तुम यह क्या अन्धेर कर रही हो, तुम्हें क्या यह याद नहीं कि हम लोग परदे में रहती हैं, यहाँ मुसल्मान चपरासी को कैसे बुला रही हो? कुसुम ने उत्तर दिया—अम्मा! बड़ा सीधा है, पूरा गऊ सा

हैं वह देखता ही है, चिक की आड़ में जरा बैठकर ब
ा, क्या हर्ज है। कुसुम के इस कहने पर अम्मा कुछ न
ीं, अलीहसन भीतर आया, और चिक की आड़ में बैठ
मोनियम ठीक करने लगा।

अम्मा ने कहा—क्यों चपरासी, तुम्हारे धरम में भी
न होता होगा, एक सुनाओ तो सही। अलीहसन बो
र, भजन-वजन तो मैं कुछ नहीं जानता। अगर हुक्म
एक गाना जो मुझे बहुत प्यारा है, आप को सुनाऊँ
ा मिलने पर अलीहसन ने गाया—

खुदा किया क्यों ज़मीं पे पैदा
जो ठोकरें था सदा खिलाना ?
दिया ही फिर आदमी का तन क्यों,
किसी ने जब आदमी न माना ?
तमाम पेशो आराम में है,
गुज़ारता ज़िन्दगी को कोई।
हमें है दुशवार सांस लेना,
है रात-दिन अश्क़ ही बहाना।
नहीं समझता कोई कि हम सब,
बने हैं बस मुश्ते ख़ाक से इक।
अमीर को भी ग़रीब को भी

कुसुम पानी पीने के बहाने से एक दूसरे कमरे में चली गई। अम्मां के ऊपर बहुत बड़ा असर हुआ, उन्होंने अली-हसन के साथ कभी-कभी रूखा बर्त्ताव भी किया था, इसका ख़याल करके उन्हें उसके प्रति अपने व्यवहार पर कुछ खेद सा हुआ। इतना तो वे मान ही गईं कि यद्यपि अलीहसन मुसल्मान है और नौकर है, तथापि उसमें अनेक ऐसे गुण हैं जिनके कारण उसके साथ अधिक सुन्दर व्यवहार करना चाहिए। कमला अलीहसन का गाना सुनकर मुग्ध हो गई। उसने अपने हृदय में कहा—हाय! यह मेरी जाति का क्यों न हुआ!



[२५]

दूसरे दिन जब भोजन तय्यार हुआ, अलीहसन को आज्ञा हुई कि वह भीतर ही चला आवे। उसके सामने कुसुम ने अब चिक की आड़ अथवा किवाड़ की ओट लेनी भी बन्द कर दी, बल्कि उसने तो यहाँ तक किया कि भोजन का पत्तल रसोई से लेकर उसके पास तक रख भी आई। अम्मा ने भी अलीहसन से कुछ परदा नहीं किया, लेकिन कुसुम से बोलीं—क्यों क्या कहारिन नहीं थी? ऊपर से इन शब्दों का यही मतलब जान

क्यों उठाना पड़ता है, परन्तु उनके भीतर यह ध्वनि निकलती थी कि मुसल्मान नौकर कितना भी अच्छा क्यों न हो, हमें बहुत अधिक आदर न देना चाहिये। परन्तु समय-समय पर इसी तरह कुछ कह देने के सिवा घर में अम्मा का और कोई काम न था। वे अपने इस कार्य्य को उतना ही महत्त्व-पूर्ण और आवश्यक समझती थीं जितना कि पेंशन पानेवाला नौकर अपने मालिक की ख़ैरख़ाही करने को समझता है। कुसुम उनकी बातों को ध्यान से सुन लेती थी, किन्तु हमेशा करती थी अपने ही मन की। लेकिन, अम्मा की इस बार की बात से वह कुछ सहम सी गई, वह जान गई कि इतनी स्वतंत्रता लेना अच्छा नहीं, परन्तु उत्तर में यही कहकर कि क्या हर्ज है, लड़का तो है, उसने सारी बात टाल दी।

भोजन से निपट लेने के बाद कुसुम ने अलीहसन से पूछा, क्यों, चपरासी! तुम्हें अपने पुराने मालिक के यहाँ खाने को क्या मिलता था? अलीहसन बोला—हुजूर उनके यहाँ तो मैंने पेट भर के खाना कभी नहीं खाया, दो-तीन रोटी, थोड़ी दाल और ज़रा सा वह .....

कुसुम—वह क्या चपरासी?

अली०—हुज़ूर, वही जिसे आप बहुत बुरा समझती हैं।

कुसुम—तुम्हारा मतलब मांस से है। ठीक, अच्छा, हमारे

अली०—हुजूर, मैं क्या कहूँ, ऐसा खाना तो मुझे ज़िन्द[गी]
में नहीं मिला था, खूब पेट भर के खाता हूँ।

इतनी बातचीत के बाद अलीहसन को आज्ञा हुई कि व[ह]
[क]मरे में जाकर बैठे। शाम को कुसुम फिर अपने निय[त]
[स्था]न पर आकर बोली—चपरासी! कल सबेरे हम लोग गं[गा]
[स्ना]न को जायँगे, महराज और रघुबर कहार तो जायँगे [ही]
[तुम्]हें भी साथ चलना होगा, चार बजे सबेरे तैयार हो जान[ा।]
[अल]ीहसन ने कहा—हुज़ूर मैं मुसल्मान हूँ, आप के धरम [के]
[विरु]द्ध तो न होगा? कुसुम ने कहा—इन बातों से तुम्हें को[ई]
[मत]लब नहीं, तुम्हें केवल अपने मालिक की आज्ञा मान[नी]
[होग]ी, शेष बातों की चिन्ता तो हम स्वयं कर लेंगे। अलीहस[न]
[ने] कहा—जैसा हुक्म सरकार का।



[२६]

सवेरे पाँच बजे सब लोग गंगा स्नान के लिए गाड़ी पर चढ़ कर गये। यह बात तय पाई थी कि गंगा के उस पार भोजन बनाया जाय और देवताओं का दर्शन करते हुए शाम को सब लोग घर आ जायँ। गंगा के किनारे गाड़ीवान और गाड़ी को छोड़ कर बोट पर सवार हो कर मंडली उस पार गई। वहाँ नहाने धोने के बाद कुछ देर तक बोटिङ्ग होती

देगण, तथा गंगा की तरङ्गित शोभा आदि ने तो अपूर्व
श की सृष्टि कर ही रक्खी थी, घण्टे के नाद से गुञ्जाय-
न एक मन्दिर के भीतर पूजा के लिए एकत्र नर नारी के
द्धा-पूर्ण प्रार्थना-गान से वहाँ का धार्म्मिक रंग भी खूब
हरा हो गया था। कुसुम, अम्मा, और कमला दर्शन के लिए
ली गईं, तब तक कहार और महराज अलीहसन को साथ
कर सुरम्य वाटिका की ओर चले और भोजन बनाने के
ग्य अच्छी जगह ढूँढ़ने लगे। दस पाँच मिनट इधर उधर
व लेने के बाद उन्होंने एक जगह पसन्द की, वहाँ चारों ओर
अमरूद के पेड़ों ने घेर कर छाया कर रक्खी थी, और दस
ाँच आदमियों के लिए साथ बैठ कर खाने का काफी सुभीत
ा। अलीहसन अलग जाकर बैठा। कहार उपले लाने के लिए
हीं चला गया, थोड़ी देर में लौट कर उसने बाटी बनाने के
लए दो जगह उपलों का ढेर लगाया, और उनमें आग डाली
तने में अम्मा, कुसुम, और कमला भी आ गईं। अम्मा ने
हा—क्यों महराज, अभी आग ही जली है, इतनी देर तक क्य
र रहे थे? यह सभी लोगों को अच्छी तरह मालूम था कि
म्मा की बातें यों ही हुआ करती हैं, उन्हें केवल सुन लेन
ाहिए और उत्तर देने की विशेष चिंता न करके दीन भाव से
[illegible] धीरे से कह देना चाहिए—इतने धीरे

ी नौकर समझते थे, क्योंकि उसके अभाव में अम्मा क
ाज़ी ही परिणाम होता था, और अगर उसकी मात्र
ोष हो गई तो चूंकि पंडित जी उनकी कोई बात नहं
लते थे, नाराज़ी और बरख़्वास्तगी दोनों का प्रायः एक ह
ाँ हो जाया करता था। अब की बार भी महराज ने इ
था का अवलम्ब लिया। इतने में कुसुम ने कहा—मह
त, तुम अपने लिए अलग बना लो, और सब के लिए आ
ही बाटी बनाऊँगी। अम्मा ने कहा—कुसुम, तुझे सन
जाती है क्या, थकी माँदी आकर अब तू आग और धु
सामने बैठ कर पाँच आदमियों के लिए भोजन बनायेगी
ुम बोली—अम्मा, महराज के हाथ की तो रोज़ खाती ह
ज मेरे हाथ की भी खा लो। कमला बहुत खुश हुई, उस
ा—भाभी, तुम आज महराज बन रही हो तो कहार क
म मुझे करने को दो। अम्मा खीझ कर बोलीं—अरे तु
गों को क्या हो गया है, कुछ पागल तो नहीं हो गई हो
ा मुझे मुँह बाँधकर ही बैठना पड़ेगा? कुसुम ने हँस क
हा—अम्मा देखती तो रहो बात की बात में भोजन बना
। हाँ यदि मुँह बाँधकर बैठना न अच्छा लगे तो तुम्हें प
जन बतला दूँ। अम्मा को नई भजनें सीखने का बड़ा शौ

कृपा करो हे गिरिधारी।
मेरा संकट काटो झटपट हरो सकल पीड़ा भारी।
बाटी दाल खिला दो चटपट भूख मिटे मेरी सारी।

इस भजन की तीसरी लाइन के आरम्भिक शब्दों को सुन सब के सब हँस पड़े, अम्मा तो लोट पोट हो गईं।

डेढ़ घण्टे के अन्दर बाटी दाल वगैरह सब कुछ तैयार हो ा। कुसुम और कमला दोनों ने पत्तलों पर परसना शु या। जब परसा जा चुका और सब के लिए पानी र या गया तब कुसुम ने अलीहसन से कहा—तुम भी कप ार कर और पैर धोकर आ जाओ। अम्मा ने भौंहे टेढ़ के कहा—कुसुम, क्या नौकरों को भी साथ खिलावेगी, य ा ठीक नहीं है, भैया इसे जानेंगे तो क्या कहेंगे, अप र्यादा इस तरह न मिटानी चाहिए, बहू। कुसुम ने हँ कहा—अम्मा राम के यहाँ सब आदमी बराबर हैं, य लोग पूजा और आनन्द के लिए आये हैं, साल में ए र तो सब को बराबर समझ लें, फिर, हमारे पास बैठ क ड़े ही ये लोग खायँगे, ये लोग अलग ले जाकर ही ख कते हैं, हम लोग खायँ और ये लोग बैठे बैठे देखें, यह अच्छा नहीं है। यह सुनकर अम्मा चुप रह गईं। कहा र अलीहसन के लिए दो पत्तलें कमला ने बाहर कर दी

अलीहसन को दे दिया और उससे कुछ दूर जाकर खाने लगा।

कुसुम ने खाते हुए सिर उठा कर देखा तो अलीहसन को बहुत दूर खाते पाया, वह बेचारा कुछ तो स्वाभाविक संकोच के कारण बिलकुल आड़ में और कुछ अम्मा के डर से बहुत अलग चला गया था।

खा चुकने पर कुसुम ने अलीहसन से पूछा—क्यों चपरासी! बाटी कैसी रही? अलीहसन ने सिर नीचा कर के कहा—बहुत बढ़िया। कोई चार बजे तक मण्डली घर पहुँची। आठ बजे रात की गाड़ी से पंडित जी भी आ गये।



[२७]

एक दिन कुसुम ने हँसते हँसते पंडित जी से कहा—तुम बनते तो हो इतने बड़े सुधारक, लेकिन हिन्दी जानते हुए भी अपना सारा काम उर्दू और अँग्रेज़ी में करते हो। पंडित जी ने भी हँस कर कहा—सुनो, तुम घर की मालकिन हो, घर के सम्बन्ध में कोई बात कहो तो तुम्हारा अधिकार कहने का है और मेरा कर्त्तव्य मानने का है, लेकिन अगर यह कहो कि

वक्तृता के सम्बन्ध में भी मैं तुम्हारी आज्ञा के सामने सि झुकाया करूँ, तो वह तुम्हारा अन्याय है। कुसुम के उत्त की प्रतीक्षा किये बिना ही यह कहते हुए पंडित जी अपने कमरे में चले गये। कुसुम अपने काम में लग गई।

उसी दिन की संध्या को पंडित जी ने अपने प्राइवेट सेक्रेटरी से कहा कि रिआया के सुभीते के लिए दफ़्तर का सब काम हिन्दी में करना होगा। सेक्रेटरी ने कहा—हुज़ूर, सब नौकर तो हिन्दी नहीं जानते। पंडितजी ने तुरन्त ही उत्तर दिया—तो हिन्दी सीखना ही कौन मुशकिल है, छःमहीने में सीख लें। सेक्रेटरी चुप हो रहा।

दूसरे दिन खाना खाकर जब अलीहसन बाहर जाने लगा, कुसुम ने उसे रोक लिया, पूछने लगी कि कोई कष्ट तो नहीं है। अलीहसन ने कहा—आप की मिहरबानी से मुझे कोई तकलीफ़ नहीं है, और अगर हो भी तो हम तो नौकर आदमी हैं, इसके लिए डरें तो कहाँ तक काम चल सकता है। कुसुम ने कहा—देखो, हम लोग तुम्हें सिर्फ़ नौकर समझ कर नहीं ख रहे हैं। तुम बचपन से ही बिना माँ बाप के हो, यद्यपि तुम ुसल्मान हो, तथापि हम लोग तुम्हें अपने ही बच्चे सा ामझ कर तुम्हारे साथ अच्छा व्यवहार करने की कोशिश कर हे हैं, इस दशा में यदि तुम्हें किसी प्रकार का कष्ट हुआ तो में बड़ा दुःख होगा।

हुज़र, और कुछ तो नहीं, मालिक ने हिन्दी पढ़ने का हुक्म जारी किया है, रियासत भर के नौकरों को पढ़ना होगा, अब मैं कैसे और किससे पढ़ूँ ? कुसुम ने कहा—इतना ही कहना है कि और कुछ ? अलीहसन ने कहा—इतना ही। कुसुम ने कहा—अच्छा जाओ।



[२८]

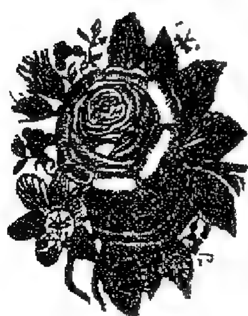
भोजन करते समय पंडित जी ने हँस कर कुसुम से कहा—जो काम मैं पचासों व्याख्यान देकर न कर सकता, उसे देखता हूँ कि तुम बिलकुल सरलता से किये जा रही हो। जिस समय आया था, कितना कट्टर था, हिन्दू होने की बात चलाते ही मेरे पास से चला गयाथा, अब कम से कम इसका रहन-सहन तो बिलकुल हिन्दू का सा हो गया है। कुसुम बोली—

...ा है। पंडित जी ने कहा—हिन्दी सीखना क्या मुशकिल ...
...र्णमाला की एक किताब लेकर पढ़ ले, कई नौकर तो जान...
... उनसे सहायता ले ले।

अलीहसन हिन्दी की किताब ख़रीद लाया। शाम ...
...ुम ने आकर कुछ बतला दिया, दूसरे दिन खाने के लि...
...ते समय वह किताब साथ लेता गया, और भोजन ...
...हने पर उसने कुसुम से दो एक पन्ना पूछ भी लिया। कुसु...
अलीहसन को ख़ूब अच्छी तरह समझा दिया।

पंडित जी जब घूमने चले गये, कुसुम ने अलीहसन ...
... के अन्दर आने का हुक्म दिया। जब वह गया तो उस...
...मा, कमला, और कुसुम को घर के आँगन में कुर्सियों प...
... पाया। कुसुम के बहुत कहने पर कमला बैठी रह गई, यद्य...
...मा को यह बहुत बुरा मालूम हुआ। उनकी टेढ़ी भौंहें दे...
... कुसुम उनके मनोगत भाव को ताड़ गई, बोली—अम्म...
...ा सुनो, इसका उच्चारण तुम्हें सुनाने के लिए इसे यह...
...ाया है। इतना कह कर उसने अलीहसन की ओर मुँह कर...
...ा—हाँ, ज़रा 'संस्कृत' तो कहना। अलीहसन को इस सम...
...ोच का भार असह्य मालूम होने लगा, परंतु कुसुम की कृ...
...र वत्सलता-पूर्ण दृष्टि ने उसके हृदय में साहस का सञ्चा...
... दिया और उच्चारण-सम्बन्धिनी अपनी अयोग्यता ...

उसने 'ससकिरत' कह ही दिया। अम्मा कुछ संस्कृत औ
दी अच्छी तरह पढ़ी थीं, कमला तो हिन्दी में लेख
ती थी, मुसलमानों के उच्चारण का इन लोगों को का
भव नहीं हुआ था, फल यह हुआ कि अलीहसन के मु
यह शब्द सुनकर सब लोग हँस पड़ीं, कमला तो हँसी
ना कर के वहाँ से अलग भी चल दी। अम्मा ने सरलत
क कहा, हाँ, हसन, ज़रा एक बार और कहना। अलीहस
कहा—संसकिरत। अम्मा और कुसुम फिर हँसने लगी
र थोड़ी देर के बाद कुसुम ने अलीहसन से कहा, अच्छ
ओ बाहर बैठो। अलीहसन जाकर बरामदे में बैठा, औ
माला की किताब पढ़ने लगा।



[२६]

धीरे धीरे अलीहसन को घर के भीतर आने जाने की इतनी स्वतन्त्रता प्राप्त हो गई कि उसे कुछ भी कठिनाई पड़ती तो वह मालकिन के पास बेखटके चला जाता। पंडित जी के घूमने चले जाने के बाद तो वह बरामदे में बैठता ही न था, अपनी हिन्दी की किताब लेकर वह सीधा कुसुम के कमरे में प्रवेश करता और उससे हिन्दी पढ़ता। एक बार कुसुम ने फिर

अली हसन ने कहा—हुजूर इसे व्यर्थ पूछती हैं, ज
प मुझे लड़के की तरह मान रही हैं तो मुझे कोई तकलीफ़
ीं होगी। कुसम ने कहा—देखो तुम मुझे 'हुजूर'
ा करो, यह शब्द पुरुषों के लिए ही प्रयोग में आता है
लिये बाबू जी को ही इसके द्वारा सम्बोधित किया करो
 सब लोग 'छोटी अम्मा' कहते हैं, तो तुम भी यही कहो
ीहसन ने कहा—जैसा हुक्म सरकार का। कुसुम ने फि
कर कहा—सरकार भी मुझे मत कहा करो, मुझे केव
टी अम्मा' कहा करो।

अलीहसन दोनों वक्त भोजन तो करता ही था, कुसु
ों से छिपा कर उसे बहुत कुछ खाने को दे दिया करती थी
हार के इनाम के बहाने वह एक गिन्नी से कम कभी
ी, शाम को जब वह पढ़ने जाता तो फल, मिठाई, अथव
ुआ आदि वह अपने कमरे में रक्खे रहती और पढ़ा चुक
बाद उसे चोरी से खाने को देती। कभी कभी अम्मा य
ला देख लेतीं तो वह चोर की नाईं लज्जित हो जाती।

तीन चार महीनों के बाद कुसुम ने रामायण पढ़ पढ़ क
ोहसन को सुनाना शुरू किया। अलीहसन को रामचन
र सीता की बनवास-कथा बहुत पसन्द आई। एक दिन कुसु

कैसे तरह विदा माँगते ? अलीहसन ने कहा—छोटी अम्मा, इन बातों में क्या रखा है, लेकिन हाँ रामचन्द्र की कथा बहुत बढ़िया है। कुसुम ने कहा—हसन, अगर तुम मेरी एक बात मानो तो मैं तुम्हारी माँ को तुमसे मिला दूँ। अलीहसन ने आश्चर्यचकित होकर कहा—छोटी अम्मा, क्या सच कहती हो, क्या मेरी माँ अभी जीवित है। कुसुम बोली—हाँ, तुम्हारी माँ जीवित है, और वह यह भी जानती है कि तुम यहाँ रहते हो, वह तुम्हे रोज़ देखती है, लेकिन तुम उसे नहीं पहचानते। अलीहसन ने कहा—तो, माँ को देखने के लिए आप की कौन शर्त माननी पड़ेगी, छोटी अम्मा ? कुसुम बोली—वह तुम्हें राजाराम के नाम से पुकारना चाहती है, यही तुम्हें स्वीकार करना होगा। अलीहसन ने कहा—मुझे स्वीकार है, मेरी माँ कब और कहाँ मिलेगी। कुसुम ने कहा—कल, इसी समय, और इसी कमरे में। पंडित जी के आने की बेला जान कर कुसुम ने फिर कहा—अच्छा जाओ, अपना भोजन माँग लो और खाकर बरामदे में बैठो। अलीहसन चला गया।



[३०]

कुसुम कमरे में ही चारपाई पर पड़ी रही, पंडित जी घूम कर आये, उनके पास भी वह नहीं गई, दासी बुलाने आई, उसने कह दिया तबियत बहुत ख़राब है, पंडित जी देखने आये तो पता लगा कि सचमुच उसे बुख़ार आ गया था। पंडित जी ने कुछ दवा मँगानी चाही, कुसुम ने बहुत धैर्य पूर्वक कह दिया—लंघन कर दूँगी, सबेरे तक अच्छा हो जायगा। तकिया

[ह का कीड़ा]

दूसरे दिन सबेरे अलीहसन ने सुना कि छोटी अम्मा बीमार
। अन्दर जाने का एक बहाना निकाल कर वह कुसुम के कमरे
गया और दो चार मिनट तक खड़ा रहा। कुसुम ने देख
: कहा—जाओ उसी समय आना । अलीहसन उदास
कर चला आया।

अलीहसन बरामदे में बैठा हुआ मिनट मिनट गिन रहा
। रामायण पढ़ने में भी उसकी तबियत नहीं लगती थी
ह यही सोच रहा था कि यह कैसा अन्धेर है जो मेरी मं
ज़ मुझे देखती है और मुझ से बोलती नहीं। ज्यों त्यों करके
ार बजने का समय आया। आज पड़ोस में बिरादरी में ब्याह
म्बन्धी कुछ काम था, कुसुम की तबियत भी हलकी हो ग
ो, पंडित जी, अम्मा और कमला वहां चली गईं, बहुत से
ौकर चाकर भी धूमधाम देखने के लिए चले गये। पंडित जी
ा एक नौकरानियों को कुसुम के पास रहने के लिए ख़ास
ह्दायत कर गये थे। थोड़ी देर के बाद कुसुम घर में इधर उध

कर कुसुम ने कहा—पन्द्रह मिनट में आना। अलीहसन
य उछलने लगा।

पन्द्रह मिनट के बाद अलीहसन भीतर गया। कुसुम
वाज़े के सामने वह ज्यों पहुँचा त्यों पत्थर की मूर्ति की तर
त्र-लिखा सा रह गया। यह क्या, छोटी अम्मा ने यह कैस
बनाया है! साड़ी की जगह एक मैली कुचैली फटी धोत
हाथ में सोने के कङ्कन की जगह गमारिनों की सी चूड़ि
और एक दिन की बीमारी में चेहरा इतना उतर गया
महीनों की बीमार हो। फिर अलीहसन ने पूछा—छो
मा, आज आपको यह क्या हो गया है? कुसुम की आं
आंसू की नदी उमड़ पड़ी, लाख रोकने पर भी वह अप
न रोक सकी,। मेरे बेटा, मेरे लाल, मेरे राजाराम! कह
उसने उसे गोद में ले लिया और लोकलाज की बिलकु
वा न कर के जितनी ज़ोर से वह रो सकी उतनी ज़ोर से रो
ी। अलीहसन चकित होकर बोला—छोटी अम्मा, आ
गल हो गई हो क्या, हाय, आपको यह कैसा रोग हो ग
मुझे छोड़िये, जाऊँ बाबू जी को इत्तिला दूँ। कुसुम
ने आंसुओं को पोंछते हुए कहा—बेटा राजाराम मैं पाग
ी हूँ, मैं ही तेरी मां हूँ, जिस दिन मैं तुमसे अलग हु

हीं है, कहां आप ब्राह्मण, और कहां मैं मुसलमान ! मुझे बाबू साहब के पास ख़बर ले जाने दो। कुसुम ने फिर कहा—बेटा, पागल नहीं हूँ, तू जो चाहे सो पूछ कर मेरी बुद्धि की रीक्षा कर ले। अलीहसन ने कहा—अच्छा बतलाओ, बाबू ाहब के कै लड़के हैं ? कुसुम ने कहा—एक भी नहीं। अली- सन ने फिर पूछा—आप किस जाति में हैं ? कुसुम ने कहा, ाह्मण। अलीहसन बोला—पंडित जी आप के विवाहित ति हैं या नहीं ? कुसुम ने उत्तर दिया, 'हाँ'। ये सब उत्तर ीक थे, और यदि इनके आधार पर ही कुसुम की चित्त-स्थिति ा निर्णय किया जाय तो यह किसी तरह नहीं कहा जा सकता के वह पागल है, परन्तु इन की सच्चाई ही तो उसे और भी असमंजस में डाल रही थी। बेचारा अलीहसन यह नहीं समझ सकता था कि वह कुसुम का लड़का कैसे हो सकता था। उसे निश्चय हो गया कि छोटी अम्मा पागल हो गई हैं और कुछ भयभीत सा होकर कुसुम से जी छुड़ाकर वह कमरे के बाहर चला गया। इतने में पण्डित जी आ गये और उसे अत्यन्त घबराहट की हालत में घर के भीतर से निकलते हुए उन्होंने देख लिया। पण्डित जी को कुछ कहने का अवसर दिये बिना ही वह बोल उठा—हुजूर छोटी अम्मा पागल हो गई हैं।

कर पूछा—क्यों तबियत कैसी है ? कुसुम कुछ न बोली। कई बार पूछा—वह ज्यों की त्यों चुपचाप बैठी ही रही। परिडत जी ने अलीहसन को बुलवा कर कहा—जाओ डाक्टर को बुला लाओ। आध घण्टे में डाक्टर साहब आ गये, यन्त्रों द्वारा परीक्षा करके बोले—कुछ नहीं, किसी कारण से हृदय मे उत्तेजना हो गई है, रात भर में चित्त ठिकाने हो जायगा, कोई विशेष चिन्ता की बात नहीं है। सबेरे तक सचमुच कुसुम चंगी हो गई, उसने फिर अपने अच्छे कपड़े पहिन लिये, और, यद्यपि वह कुछ दुबली जान पड़ती थी, तथापि उसके चेहरे पर एक अपूर्व सौन्दर्य्य दिखलाई पड़ रहा था।



[३१]

गत दस वर्षों में रामकिशोर की पूरी कायापलट हो चुका है। जो कुछ रुपया उसके माँ बाप के मरने पर उसे मिला था तथा और जो कुछ जायदाद उसके पास थी, उसे वह धीरे धीरे रंडियों के हवाले करके भिखारी बन गया है। रामकिशोर

। कथा सुनाने पंडित जी के यहाँ आया। इतने दिनों के बाद
ट होने तथा मित्र की करुणा-जनक विपत्ति-गाथा सुनने
र पंडित जी की आँखों में आँसू भर आये। उन्होंने, उसे
पने यहाँ नौकर रख लिया। कुसुम को यह बात पीछे
ालूम हुई। उसने उनसे कहा कि एक रामकिशोर को मैं
ानती हूँ, यदि वही आदमी है तो तुमने सख्त ग़लती की
क दिन यह जानने के लिए कि आदमी वही है या दूसरा
ुसुम ने रामकिशोर को खिड़की में से देखा। रामकिशोर ने भ
ुसुम को देख लिया, देख कर ताड़ गया कि देखनेवाली कुसुम
फ़ महारानी है। कुसुम भी जान गई कि वही रामकिशोर है
स बात से रामकिशोर को ख़ुशी और अचम्भा, साथ ह
ुसुम को अत्यन्त अधिक आन्तरिक पीड़ा हुई।

एक दिन कुसुम कमरा बन्द करके चारपाई पर लेटी हु
ी। तरह तरह की अनेक भावनाएँ उसके हृदय को सशंक
यभीत, और पीड़ित कर रही थीं। इतने में दर्वाज़ा खटख
ाया गया, उसने उठ कर खोला, नौकरानी ने एक मनोह
िफ़ाफ़े में बन्द चिट्ठी उसके हाथों में दी। वह खोल क
ढ़ने लगी, उस में लिखा था:—

प्रिय महारानी उर्फ़ कुसुम,

[illegible]

कहाँ मारा मारा फिरा हूँ. अब ईश्वर ने कृपा की है, तुम मिल गई हो। अब मेरे ऊपर दया करो।

तुम्हारा,
रामकिशोर

पत्र पढ़ कर कुसुम की आँखों के आगे अँधेरा छा गया। घबराहट में डूबी हुई वह इधर से उधर करवटें बदलती रही, कुछ निश्चय न कर सकी कि अब क्या किया जाय। उस दिन उसने कुछ खाया पिया भी नहीं।



[३२]

रामकिशोर पंडित जी को आर्य्यसमाज की बातें सुनाता था और अम्मा को सनातन धर्म्म की। देश-भक्ति, जाति सेवा, ब्रह्मचर्य आदि के सम्बन्ध में अवसर पड़ने पर पंडित जी के मन-सुहाता ऐसा व्याख्यान वह दे दिया करता था कि वे भी दंग हो जाते थे। उनके प्रति प्रेम और भक्ति-भाव का ऐसा आडम्बर उसने रच रक्खा था कि उसके मुख से 'बड़े भैया'

मा को 'अम्मा' न कह कर वह 'मैया' कहता था। इस
स नवीनता का अम्मा पर बड़ा प्रभाव पड़ता था और वे
की बातें सुनने के लिए अधिक प्रेम के साथ ठहर जाती
। वह उन्हें कभी प्रयाग का माहात्म्य सुनाता, कभी हरिद्वार
चर्चा करके सन्तुष्ट करता और कभी उनसे बद्रीनाथ की
ड़ाई करता। बातचीत में स्वार्थ की ज़रा भी बू न आने
वे, इस बात का वह बड़ा ख़याल रखता था; अभी वह केवल
त्र तैयार कर रहा था।

त्रिवेदी नारायण के पिता के साथ अपने पिताकी मित्रता की
नेक मनोरञ्जक कहानियां सुना सुना कर रामकिशोर दिन प्रति
न धीरे धीरे पंडित जी तथा अम्मा पर भी अपना प्रभाव
ढ़ाता ही जाता था। धीरे धीरे ऐसी स्थिति आ गई कि यदि
ामकिशोर के विरुद्ध कुछ कहने की इच्छा कुसुम करती भी
ो उसे यह भय लगा रहता था कि कहीं उसकी बात का
ुरन्त खंडन न कर दिया जाय, यही नहीं, कहीं उसकी ओर
नके हृदय में कोई सन्देह न उत्पन्न हो जाय। एक बात और

आदि, इत्यादि । कुछ दिनों से तो रोज़ उनके पास शिकायतें
या करती थीं। अम्मा अलीहसन के विरुद्ध सब बातों व
ध्यान और बड़े प्रेम से सुना करती थीं, क्योंकि उन
धार पर वे कुसुम के सम्बन्ध में एक अभियोग खड़ा कर
हती थीं। अलीहसन के प्रति कुसुम की बढ़ती हुई कृपालु
मा की आँखों में काँटे की तरह खटकती थी और उन्हे पू
ख्याल हो गया था कि कुछ न कुछ दाल में काला अवश्य
के इस विश्वास का परिचय कुसुम अनेक रूपों में
थी।

कुसुम विचार-घन में इधर से उधर भटक रही थी
ने ही में किसी ने दरवाज़ा खटखटाया, उसने तुरन्त उ
खोला, देखा तो पतिदेव थे। वे आकर सिरहाने की ओ
गये, वह भी पैताने बैठ गई। पंडित जी ने कहा—तुम्हार
यत अब तो अच्छी है न? कुसुम बोली—अच्छी ही
एक सखी आज कल कुछ कठिनाई में पड़ गई है, उस
से एक प्रश्न का उत्तर पूछा है वही पड़ी पड़ी सो
थी। पंडित जी नें पूछा—क्या मैं भी सुन सकता हूँ
सुम ने कहा—हँसी में टालने का वादा न करो तो सुना सकत
लेकिन तुम तो मेरे पास अपने थके हुए दिमाग़ क

ों ऐसा न होगा, तुम सुनाओ । कुसुम बोली—मेर
ी इस समय एक बहुत धनवान आदमी की स्त्री है, बाल्य
ल में पति की अनुपस्थिति में उससे कुछ असावधानी ह
। उसका पति यह बात नहीं जानता, पति के प्रेम के कार
की अन्तरात्मा उसे बहुत धिक्कारती है, अब वह पूछ रह
कि मैं क्या प्रायश्चित्त करूँ । पंडित जी ने पूछा, उसे सच्
ुताप है न ? कुसुम ने उत्तर में कहा—हाँ, लेकिन उस
ना साहस नहीं है कि वह अपने पाप को स्वीकार कर ले
ोंकि उसे भय है कि वह घर मे से निकाल दी जायगी ।

पंडित जी कुछ सोचने लगे, इस बीच में कुसुम ने अपन
ावलि में से वह पत्र निकाल कर पति के हाथ में दे दिय
डित जी उसे देखने लगे, कुसुम भी उस पर आँख दौड़ान
ी । उसमें एक स्थल पर लिखा था—

सखी कुसुम ! बड़ी भारी कठिनाई यह है कि एक राक्ष
मेरा सर्वस्व-नाश करने के लिए बहुत समय से मेरे पी
ा रहा है और जिसे मेरा सारा कच्चा चिट्ठा मालूम है, अ

ाँ तक कह दिया था कि कमरा बन्द करके मालकिन उस
टों बातें करती रहती हैं। इन बातों से उनके चित्त में
; सन्देह उत्पन्न हो गया था, जिस दिन घर वाले बिराद
चले गये थे उस दिन उन्होंने अलीहसन को घर में से आ
देखा था। किसी किसी दिन जब वे घूम कर आये तब उ
होंने कुसुम के कमरे में पाया भी था, इन बातों से उनके हृद
सन्देह अंकुरित हो गया था। उन्हें यह भी मालूम था कि क
ी सखी और सखा की आड़ लेकर लोग अपने ही दिल
ें खोल दिया करते हैं। किन्तु, थोड़ी देर सोचने के बा
डित जी ने कहा—अपनी सखी को लिख दो कि य
हें अपने भूतकालीन पाप के लिए सच्चा अनुताप है
े अनुताप ही काफ़ी प्रायश्चित्त है।

यह कह कर पण्डित जी चारपाई पर से उठे और कुसु
सरल बात तथा मीठी मुसकान में अपने समस्त सन्दे
दफ़न करने की चेष्टा करते हुए अपने कमरे में चले गये
द को बहुत सोचने पर उनका विश्वास हो गया कि कुसु
सन्ताना है, अलीहसन अनाथ है, इसीलिये वह उस पर विशे
ुग्रह रखती है, और अम्मा ने धार्मिक कारणों से तथ
करों ने द्वेष के वश में होकर शिकायत की है। इधर बहु

आज उसने प्रेम-पूर्वक बातें कीं, थोड़ी देर बाद घर के काम से उन्हें कमरे में से एक बार बुलवा भी लिया। इस बार के बुलाने में विशेष सरसता थी, इसमें से यह ध्वनि निकलती थी कि इधर कई दिनों से अस्वस्थ और चिन्ता-युक्त होने के कारण ही मैंने अपने घर के काम की ओर और तुम्हारी ओर उदासीनता दिखलाई थी।



[२३]

शाम को जब पण्डित जी घूमने चले गये, राजाराम अपनी माँ के कमरे में रामायण लेकर गया। राजाराम ने कहा—अम्मा, कुछ लोग कहते हैं कि यहाँ आने के पहिले तुम सन्यासिनी हो गई थीं और मारी मारी फिरती थीं, क्या यह सच है? कुसुम ने प्यार से कहा—बेटा, इस विषय में तुम मुझसे

ाराम चुप हो रहा, प्रेम ने उसके प्रश्नों का अन्त क
ा ।

कुसुम ने थोड़ी देर तक मौन रहने के बाद कहा—राजा
, तू मुझे अपनी माँ मानता है न ? राजाराम ने कहा-
मा, क्या तुझे अभी इसमें भी सन्देह है ? कुसुम ने पूछा-
मेरी एक आज्ञा मानेगा ? राजाराम ने उत्तर दिया—यी
ण देकर भी कर सकूंगा तो करूँगा । कुसुम ने कहा—ए
दमी की हत्या करनी होगी । राजाराम ने चौंक कर पूछा-
ससे मनुष्य की हत्या कराओगी माँ, क्या कह रही हो
ुम ने गम्भीर भाव से उत्तर दिया—बेटा, जो प्रश्न तु
झसे पूछ रहे हो, उसका उत्तर मुझे मेरा हृदय दे चुक
तुम्हारी ही तरह मेरी अन्तरात्मा भी झिझकी थी, किन
सब का पूरा समाधान कर दिया है, यदि तुम कर सक
कहो । थोड़ी देर तक सोचने विचारने के बाद राजारा
कहा—उस आदमी का नाम क्या है ? कुसुम ने धीरे
ा वही जो यहां हाल ही में नौकर रक्खा गया है । राज
ने पूछा—कब ? कुसुम ने कहा—मैं बतला दूँगी । थोड़
ठहर कर वह फिर बोली—बेटा, हमारे तुम्हारे रास्ते
ी आदमी काँटा बन रहा है, यदि इसे तुम नष्ट कर सको

हीं। चुपचाप बैठे रहने में भी आज नहीं तो कल सर्वनाश वश्य है। तो क्यों न एक बार पुरुषार्थ करके आगामी विप त्तियों से बचने का प्रयत्न किया जाय, यदि सफल हुए तो सुख रहेंगे, यदि विफल हुए तो अधिक से अधिक वही होग । कुछ न करने पर भी अवश्यम्भावी है। नौकरानी कुछ ाम से कुसुम के पास आ रही थी, यह जानकर कि अली सन भीतर है, किवाड़ के पास खड़ी होकर कान लगा कर ुनने लगी। उसे समझ पड़ा कि हत्या के सम्बन्ध में कुछ ात चीत हो रही है। उधर से एक दासी और आ रही थी सकरा कर उसके बदन में चुटकी काटते हुए उसने धीरे से ान में कहा—इस वक्त दोनों की खूब घुँट रही है, तक़दीर ो तो ऐसी हो। दूसरी दासी मुसकराती हुई चली गई।



संदेह का कीड़ा]

[२२]

कुसुम की उपेक्षा से क्रुद्ध होकर रामकिशोर ने उसका सर्वनाश करने का निश्चय कर लिया और पण्डित जी से

न सकता है ? रामकिशोर को इस बात की ख़बर लग गई
उसने यही दिन अपने काम को सिद्ध करने के लिए अच्छ
समझा।

संध्या समय पण्डित जी रामकिशोर को साथ लेकर प्राय
जंगल घूमने जाया करते थे। इस समय वे रामकिशोर के सा
बहुत दिल खोल कर बातें किया करते थे और इसी सम
रामकिशोर उन्हें घर के कारबार आदि के बारे में ऐसी बा
बताता था जो पण्डित जी पर यथेष्ट प्रभाव डालती थीं। आ
घूम कर लौटने लगे तो सूर्य डूब गये थे, आकाश में मनोह
लालिमा देखकर पण्डित जी बहुत ख़ुश हुए और बोले—क्य
! इस लालिमा की उपमा तुम दे सकते हो ?

रामकिशोर ने कहा—वाह ! यह भी कोई कठिन बा
? प्रेमियों का हृदय भी तो ऐसे ही दिव्य प्रकाश से पू
रहता है।

पं०—प्रेमियों से तुम्हारा क्या मतलब ? पति-पत्नी य
और कोई ?

रा०—पंडित जी पति-पत्नी की भी गणना कहीं प्रेमियों
होती है ? मैंने तो ऐसे पति-पत्नी देखे ही नहीं जिनमें सच्च
प्रेम हो।

पंडित जी रामकिशोर की बातों से कुछ विभ्रम होकर बोले—क्या तुम्हें हज़ार में एक भी दम्पति ऐसा नहीं मिला जिसका प्रेम सच्चा हो।

हज़ार क्या, लाख में भी एक दम्पति मिलता तो मैं अपने परिश्रम को सार्थक समझता। मैंने ज़िन्दगी भर किया क्या है? जब निराश हो गया तब घृणा के साथ इस अनुसन्धान को छोड़ दिया—रामकिशोर ने कहा।

अच्छा मेरे दम्पति-जीवन के सम्बन्ध में तुम्हारा क्या विचार है—आशंका-मिश्रित कौतूहल-व्यञ्जक मुसकराहट के साथ पंडित जी ने पूछा।

रामकिशोर ने कहा—हटाइये भी, इन बातों में क्या रक्खा है।

पंडित जी स्वयं को बहुत सुखी और भाग्यवान पतियों में समझ रहे थे। उन्हें आशा थी कि रामकिशोर उनके गार्हस्थ जीवन में कोई त्रुटि निकाल न सकेगा। किन्तु, जब उसने इस चर्चा को टालना चाहा तब उनकी उत्कंठा और भी बढ़ चली। उन्होंने रामकिशोर से अपना मत प्रकट करने का आग्रह किया।

रामकिशोर ने अनुकूल अवसर आता देख कर कहा—जब

हता हूँ। वह यह कि जब एक मित्र दूसरे मित्र से अप
बन्ध में खरी समालोचना का अवसर देता है तब जि
ाये के ऊपर यह भार पड़ता है वह बहुत ही असुविधापू
ति में पड़ जाता है। मेरी स्थिति भी ऐसी ही है। यदि आ
के तथ्य बात के कहने की पूरी स्वतंत्रता दें तथा मैं जि
नों को पूछूँ उनका ठीक ठीक उत्तर दें तो जो बातें मे
मझ में आई हैं तथा मैं जो कुछ जानता हूँ वह सब आप
वेदन करूँगा।

पंडित जी इन बातों को सुनने के लिए बिलकुल तैयार
कोई ऐसी बात, जिसकी जानकारी उन्हे बिलकुल नहीं थ
के सामने पेश होने वाली थी—इसलिए सब तरह से राम
शोर का समाधान करके वे उसके कथन को सुनने के लि
ाग्र-चित्त होकर उसी के मुख की ओर निहारने लगे।

रामकिशोर ने कहा—सब से पहले मैं यह जानना चाहत
के आपने अपनी गृहदेवी जी का पाणिग्रहण करने के कित
नों बाद उनके साथ रहना शुरू किया ?

पं॰ जी—क्या तुम्हें मालूम नहीं है ? पिता जी के व्यव
र से ऊब कर मैं और मेरे साथ तुम विवाह के बाद ही
थे। तब का निकला हुआ मैं कहाँ कहाँ घूमता हुआ मु

जी सन्यासी हो गये और ससुराल में भी कोई न बचा। दो-वर्ष बाद मैं दूसरा विवाह करने ही वाला था कि मेरी पूर्व पत्नी मिल गई और मैंने उसे ग्रहण कर लिया।

रा०—आपने कैसे पहचाना कि यह मेरी स्त्री है ?

पं० जी—नाम से तथा मायके और ससुराल के समाचारों के वर्णन से।

रा०—आपकी गृहदेवी के पिता उनसे पहले मरे या बाद को ?

पं०—पहले।

रा०—और माँ ?

पं०—वह भी पहले।

रा०—आपके पिता जी के पास किसने यह खबर भेजी कि बहू भी मर गई ?

पं० जी—उसके दूर के द्रोही कुटुम्बियों ने, जिन्हें उसके हित या अहित की कोई चिन्ता न थी।

रा०—आपकी गृहदेवी ने इसका कोई विरोध नहीं किया ?

यं ससुराल की खोज में चली। किन्तु वहाँ पहुँचने पर उसे
में ताला लगा मिला। मायके और ससुराल दोनों ओ
सहायता से वञ्चित होकर उसने प्रयाग में अरइल के पास
झोपड़ा बनाकर भगवान का नाम लेते हुए जीवन बिता
निश्चय किया। एक बार फिर मैं अपनी ससुराल में गय
र बनारस जाते समय प्रयाग में स्नान करने के लिये प
ठहर गया। वह दिन शायद तुम्हें याद भी हो, क्यों
त के बाद हम तुम गंगा जी के मैदान में मिले थे। औ
ाँ हमारी तुम्हारी बहुत सी बातें हुई थीं।

हाँ, हाँ मुझे खूब याद है, आप कहे चलिए—रामकिशो
उत्कण्ठा का भाव प्रकट करते हुए कहा।

उसी दिन की संध्या को बोटिंग का आनन्द लूटने के लि
त्रिवेणी की ओर गया। गर्मियों की चाँदनी रात का घूँघ
ल पड़ने पर सारा संसार विचित्र सरलता-पूर्ण दिखाई पड़
ा था। ऐसा अच्छा जान पड़ने लगा कि त्रिवेणी के बहुत आ
नाव लेता चला गया। वहीं रोने का शब्द कानों में आया
ाँ और कोई मकान पास न देख कर मैं एक झोपड़ी में गया
पड़े के भीतर साधारण सामान थे, परन्तु सफ़ाई इत

–३० वर्ष की किसी स्त्री में नहीं देखा था। बातों बातों
क मालूम हुआ कि मेरी विवाहिता पत्नी यही है। उस
सी भी बात पर उस समय विश्वास न करना असम्भव था
रा०—यह तो आपने अपनी गृहदेवी के मुख से सुनी हु
तें कहीं, अब मैं आप को वे बातें बताता हूँ जिन्हें मैं जान
लेकिन संकोचवश आप से कभी कह न सका।

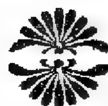
पंडित जी गम्भीर एकाग्रता के साथ रामकिशोर की ओ
ने लगे।

रामकिशोर ने कहा—पंडित जी मैंने देवी जी को प्रया
त्रिवेणी-तट पर एक दूसरे ही रूप में देखा है। उस सम
की गोद में चार वर्ष का लड़का भी था। उस लड़के
ये लिये वे 'महारानी' का नाम धारण करके भीख माँग
र इसी से अपना पेट पालती थीं। एकाएक वे वहाँ से गाय
गईं और उसके बाद बहुत दिनों तक मुझे उनके दर्श
ीं हुए। दर्शन तब हुए जब अनेक वर्षों के अनन्तर आप
हायता माँगी और आपने उदारतापूर्वक मुझे अपनी सेवा
ा लिया। यदि आप को मेरी बातों का विश्वास न हो त
ाग में चलिए और वहाँ त्रिवेणी के पंडों से मैं जो कुछ क
ा हूँ उसकी सत्यता की जाँच कर लीजिए। आज कल ज

राम०—यही, अलीहसन का बहू जी पर जैसा प्रभाव है वह क्या सहन करने योग्य बात है ? आप तो देवता पुरुष हैं ।

रामकिशोर की इन बातों को सुन कर पंडित जी पर जो असर पड़ा वह उनके निस्तेज मुख से भलीभाँति प्रकट हो रहा था । उनके मुख से उत्तर में एक शब्द भी न निकला । वे ऐसे मौन हो गए जैसे उनकी बोलने की शक्ति ही मारी गई हो ।

संध्या हो गई थी । दोनों आदमी शीघ्र घर पहुँचने के लिए तेजी से क़दम डालने लगे । रास्ते भर पंडित जी और राम-किशोर में से कोई एक शब्द भी नहीं बोला ।



[३४]

एक ओर तो रामकिशोर ने पंडित जी के कान भर दिये, दूसरी ओर उसने यह कोशिश की कि अलीहसन वहाँ से रफ़ू-चक्कर कर दिया जाय जिससे पंडित जी की समझ में यह अच्छी तरह आ जाय कि दाल में कुछ काला अवश्य है, नहीं तो यह लड़का भगा क्यों ? रामकिशोर का यह नित्य का नियम

ने में बुद्धिमानी की बात यह थी कि अगर नौकरों-चाकरं
अपने अनुकूल बातें समझा बुझा कर तैयार रखेंगे त
समय उनसे बहुत बड़ा काम निकलेगा जब पंडित ज
से कुछ जानना चाहेंगे, विशेष कर, उसका ख़याल था कि
येन केन प्रकारेण अलीहसन को भगा चुकेंगे तब उस
बन्ध में वे लोग जो बातें फैलावेंगे उनसे इस षड्यन्त्र
त अधिक सहायता मिलेगी।

नौकरों के जमादार का नाम था श्यामदास। वह दोपह
काम से फ़ुरसत पाने पर अपनी कोठरी में भोजन ब
था। उसी समय रामकिशोर ने उसके कमरे में पहुँच क
ऊँची आवाज़ में कहा—अरे अलीहसन के बारे में कु
ा है ?

बुझती हुई आग को मुँह से फूँक कर आश्चर्य और उत्क
ा का भाव प्रकट करते हुए श्यामदास ने कहा—का है बाबू
तो कुछ नाहीं सुना। खैरियत तो है ?

रामकिशोर ने कहा—खैरियत क्या होगी ? पीटा जायग
ला।

श्या०—मालिक तक खबर पहुँचाइ दियो का बाबू ? बहु

व न आवै पावइ। काहे से कि मालकिन हमार लोगन
तन छोड़ि कौनो नुकसान नाहीं कीन्ह।

रा०—भाई पंडित जी को सब बात मालूम हो गई।
ीहसन पर करारी मार पड़ेगी, यह तो तय है, रहा य
मालकिन को क्या होगा सो मैं नहीं बता सकता। भ
ामदास, मेरी तो राय यह है कि अलीहसन बेचारा भी क
!, मालिक का हाथ, क्रोध की हालत, न जाने अङ्ग भङ्ग क
ते तो वह भी बदनामी की बात। ऐसा करना चाहिए f
ा आपस ही में रह जाय। बाहर वाले सिर्फ़ इतना जानें f
सी वजह से नौकरी छोड़ कर चला गया। बड़े आदमी व
ज़त की बात है।

श्या०—आप ठीक कह रहे हो बाबू जी, साले को ऐस
ाय दें कि आपै भागि जाय, साँप मरै और लाठी न टूटै
त अच्छा, हम ई काम करि डरिहैं, आप निसाखातिर रहैं

इस बातचीत के दूसरे ही दिन अलीहसन बँगले से ल
ा हो गया। उसके चले जाने से बँगले में सभी प्रसन्न थे
था तो केवल दो स्त्रियों को। वे थीं कुसुम और कमला
ुम समझ गई कि रामकिशोर उसके विरुद्ध एक भय
षड्यन्त्र की रचना कर रहा है और राजाराम को भर

स्थिति से विवश हो जाने पर कुसुम के हृदय की संपू
ना उस प्रचण्ड क्रोध के रूप में परिणत हो गई जो मनुष
बावला कर देता है और जो अपने सामने केवल सर्वना
का दृश्य देखना चाहता है। इस कारण अपनी कमीज़
री पाकेट में एक बड़ा छुरा रखने के बाद एक भीषण संकल
के वह इस संसार को चलाने वाली महाशक्ति से धैर्य औ
ता का वरदान पाने के लिए बारम्बार प्रणाम करने लगी।

रात्रि के दस बजे पंडित जी कुसुम के कमरे में गये। चार
ई पर बैठते ही बोले, चपरासी तो भाग गया, घर की को
ज़ तो नहीं ले गया ?

कु०—भागने के वक़्त न वह मेरे पास आया था और न
ही उसे देख पाया था। घर की चीज़ों में कोई चीज़ ग़ाय
नहीं देखती हूँ।

पंडित जी ने उग्र रूप धारण करके पूछा—तुम्हें उस
ने से कुछ रंज है या नहीं ?

कुसुम ने उत्तर दिया—रंज तो मुझे बहुत है, उसके लि
, अपने लिए भी। उसके सम्बन्ध में आप के मित्र ने जैस
टी-सीधी बात फैलायी है और उसके साथ सा
के भी घर घसीट कर जैसा अन्याय किया है वह कुछ खु

पं०—मेरे मित्र ही क्यों, उससे कौन खुश था। नौक
करों से ले कर अम्मा तक को उस के विरुद्ध ही देखा। केव
उससे प्रसन्न थीं।

कुसुम ने दृढ़तापूर्ण स्वर में कहा—इसके लिए मु
ताना नहीं है।

पंडित जी ने पूछा—उसकी ओर तुम इतना क्यों झुक
कुसुम, वह तुम्हें क्यों इतना प्रिय मालूम होता था?

कु०—उस अनाथ बच्चे के प्रति मेरे हृदय में आप ही आ
की धारा उमड़ पड़ी थी। माँ का अपने बच्चे के लि
ा प्रेम होता है उस पर मेरा वैसा ही प्रेम था। इस प्रे
और लोग बरदाश्त नहीं कर सकते थे, इसी से सब ने उ
विरुद्ध शिकायत की।

पं०—किसी और लड़के के साथ इतना अधिक प्रेम
ते मैंने तुम्हें नहीं देखा कुसुम! इसी लड़के में ऐसी कौ
ख़ास बात थी।

कुसुम की आँखें भर आयीं। वह कुछ उत्तर न दे सकी
डत जी ने समझा कि कुसुम अपराधिनी है।

पंडित जी ने फिर पूछा—क्यों कुसुम! जब मैंने तुम्हार
रिचय पाकर तुम्हें ग्रहण कर लिया था तब तुमने मुझसे यह बा

के कई वर्ष प्रयाग में त्रिवेणी के तट पर सभी प्रकार के पुरु
मनोरञ्जन कर चुकी हो। ठीक ठीक उत्तर दो कुसुम, क्ये
तुम्हारे इसी उत्तर पर तुम्हारा भविष्य जीवन निर्भर है।
कुसुम की आँखों से आँसू की धारा उमड़ चली। उस
झ लिया कि अब कुशल नहीं है। नीच रामकिशोर ने
ल सच्ची बातें इन्हें बतला दी हैं बल्कि उन पर नमक मि
लगाया है। सत्य के विकराल स्वरूप को देखकर न
समें इनकार करने की हिम्मत रही और न स्वीकार
ने का वल उसमें सहसा आ सका। परन्तु, यदि नीचे झु
शिर, मौन जिह्वा, तथा शून्य में निरुद्देश्य भाव से टँ
आँखों का कोई अर्थ हो सकता है तो वह यही था कि ह
अपराध किया है।

पण्डित जी ने गरज कर कहा—क्यों रे पापिनी! बोल
ाँ नहीं? मुझे यह नहीं मालूम था कि तू मुझे ठग रही है
ीं तो उसी समय मैं तेरा काम तमाम कर देता। यदि तुझ
साहस हो तो इनकार कर दे, किन्तु मैं तुझे प्रयाग में
ा कर एक एक पाण्डे को दिखाऊँगा और तब जो कुछ
यहाँ नहीं बता रही है उसे त्रिवेणी-तट की पवित्र बालुक
एक एक कण मौन किन्तु घृणा के स्पन्दन से प्रभावित

पण्डित जी के क्रोध की मात्रा बढ़ती देखकर कुसुम थर-
र काँपने लगी और इस भय से कि कहीं वे मार न बैठें
सने चुप रहना ही उचित समझा, क्योंकि एक तो यह प्रायः
ख्य ही था कि वह अपराधिनी है, दूसरे यदि वह अपरा-
नी न भी होती तो यह अवसर बहस करके शंका-समाधान
रने का नहीं था।

अपने प्रश्न का उत्तर न पाने पर त्रिवेदीनारायण झल्ल
ठे और थोड़ी ही दूर पर सामने तिपाई पर बैठी हुई कुसुम
ो इतने ज़ोर से उन्होंने ढकेला कि वह बेचारी सिर के बल
मीन पर गिरी और सिर के रक्त की धारा से फ़र्श रंग उठी
ितना जल्द हो सका कुसुम उठी और दरवाज़े के पास
ीवाल के सहारे खड़ी हो गई। इस समय उसकी दशा उस
रिणी की सी हो रही थी जो किसी भूखे और झुंझलाये हुए
ाघ के सामने पड़ जाती है। जिन त्रिवेदीनारायण पर कुसु
ासन किया करती थी, जो उसके इशारों पर नाचते थे उन्ह
े उत्तेजित मुख-मण्डल की ओर दृष्टि डालने की ताब आ
ुसुम में नहीं थी। नैतिक पतन मनुष्य को कितना दुर्बल बन
ता है।

त्रिवेदीनारायण धीरे धीरे कुछ शान्त हुए। किन्तु, शा

ब करना क्या चाहिये, यही विचारणीय था। पण्डित जी
स बात से सन्तुष्ट हो सकते थे कि कुसुम अपने पूर्व पाप को
ाफ़ साफ़ स्वीकार कर ले तथा भविष्य में अपने जीवन को
धारने का वादा करे। किन्तु यहाँ तो जिस कठिनाई से वे
धिक खीझ उठे थे वह थी कुसुम का मौन व्रत धारण।
नकी समझ में इसका अर्थ यह था कि वह जैसी है वैसी ही
ी रहेगी। वे फिर बोले—कुसुम! इस तरह तुम मेरे साथ
हीं रह सकतीं। मैं तुम्हें घर में रख कर मुँह में कालिख नहीं
गाऊँगा। यदि तुम व्यभिचारिणी हो और वही बनी रहना
ाहती हो तो मेरे मकान से शान्तिपूर्वक निकल जाओ। इसी
तुम्हारी कुशल है।

किन्तु, कुसुम की तो ज़बान ही पर जैसे ताला लग
या था। न उससे 'हाँ' करते बनता था और न 'ना' त्रिवेदीना
ायण को उसके केवल सिसक सिसक कर रोने की आवाज़
ुनाई दी। इस क्रोध की अवस्था में भी वे यह अनुभव
रते थे कि स्त्री को घर से निकाल कर बाहर कर देने में
पनी ही बदनामी है, फिर भी यह दिखाने के लिए कि वे
िस सीमा तक जा सकते हैं वे उठे और दरवाज़ा खोलकर
न्होंने कुसुम को कमरे के बाहर निकाल दिया और भीतर से

क दम से बन्द कर दिया। इस दुर्दशा से उसने मौत का आ
ना ही अच्छा समझा। पति ने त्याग दिया, लड़के को
माज के सामने वह अपना लड़का नहीं कह सकती, अबोध
सनकाल का एक अपराध तक्षक की तरह उसे डसने को
दा तैयार है—यह सब सोचकर उसने सूर्योदय होने के
हले ही अपने जीवन की इतिश्री कर देने का निश्चय किया
रन्तु रामकिशोर, रामकिशोर भी तो न जीता रह जाय
दि मेरा सर्वनाश करने वाला यह निशाचर अपनी विजय
र गर्व से उन्मत्त होने के लिए रह ही जायगा तो मरने पर
ी मेरी आत्मा को सन्तोष न होगा। इसलिए पहले यह नरक
ी यातना सहने के लिए प्रस्थान करे, उसके बाद मैं भी अपने
पराधों का दण्ड भुगतने के लिए रवाना हो जाऊँ। उसका
ाथ उस छुरे पर गया जिसके भरोसे उसने यह कार्य करने
ा निश्चय किया था। सारा अपमान, सारा क्रोध, सारा परि
ाप, सारी वेदना इस समय केवल इसी एक निश्चय को कार्य
प में परिणत करने के प्रबल संकल्प में विलीन हो गया और
ल तक की सुशील कुलवधू कुसुम आज एक सफल हत्या
ारिणी होने का उद्योग करने लगी।

भंडाफोड़

[३५]



वेरा होते ही रामकिशोर की हत्याका समा-
चार सारे बनारस शहर में बिजली की

रत ही नहीं थी। कुसुम भी बनारस के सार्वजनि
वन में बिलकुल अज्ञात नहीं थी; उसकी सुशीलता, उसक
-प्रेम आदि शहर भर में प्रसिद्ध था। इस कारण पंडि
के घर पर पुलिस की भीड़ के साथ साथ जनता की भ
त बड़ी भीड़ लग गई।

हत्याकारिणी कुसुम का मुख-मण्डल इस समय शानि
र गम्भीरता से परिपूर्ण था। पुलिस ने उससे बहुत चाह
हत्या के कारणों का भी पता उसी से लगा लें, लेकि
ने उत्तर दिया कि शेष सब बातें मैं अदालत ही के साम
गी। कुसुम की वाणी में कुछ ओज आ गया था औ
का कथन आत्मा की गहराई में से निकल रहा था। इस
ये दारोगा की भी यह हिम्मत नहीं हुई कि उसे अधिक प
न करें। पुलिस ने शहर के मैजिस्ट्रेट के सामने मामल
किया। उसने सेशन्स की अदालत में भेज दिया।

पहली पेशी के दिन नियमानुसार कार्यवाहियों के पश्चा
कारी वकील ने हत्या का अभियोग अदालत के साम
तुत किया। साथ ही उसने यह बताया कि अभियुक्त स्व
ीकार कर रही है कि उसने हत्या की। अतएव इस माम
सरकार की ओर से कुछ अधिक कहे जाने की ज़रूरत

ये थे, तथापि उनके कई वकील मित्रों ने यह अपना कर्त
झा कि अभियुक्त की ओर से कुछ पैरवी कर दें। इन्ह
लों में से एक ने कुसुम की ओर से अदालत से यह निवे
किया कि हुज़ूर, अभियुक्त से कुछ और बातें भी पूछ लेन
हिएँ। उन्होंने कहा—हमारा निवेदन है कि अभियुक्त
ध आदि मनोविकारों के वेग से अपनी विवेक-बुद्धि सर्वथ
कर यह कार्य किया। इस दशा में वह हत्या के अपराध
र निश्चित दंड की भागी नहीं हो सकती, और इसी कार
मामला इतनी जल्दी समाप्त नहीं किया जा सकता जित
दी हमारे दोस्त सरकारी वकील साहब चाहते हैं।

इसका उत्तर सरकारी वकील ने इस प्रकार दिया—

रामकिशोर पं० त्रिवेदीनारायण के यहाँ नौकर की हैसि
से रहता था। पंडित जी के तमाम घरेलू कामों की प्र
क स्वयं अभियुक्त थी और उसमें रामकिशोर का कोई हा
था। रामकिशोर तो पंडित जी की जमींदारी के कारब
देखरेख करता था। अतएव इन दोनों के अधिक सम्प
कोई विशेष अवसर .नहीं था। लेकिन, जैसा कि मैं आ
त कर बताऊँगा, और गवाहों के बयान से अपने कथन
द करूँगा, अभियुक्त का चरित्र अच्छा नहीं था, और सम्भ

दि इस तरह के क्रोध की ओर हमारे दोस्त का इशारा हो ो मैं इसे मँजूर करने को तैयार हूँ। मैं थोड़े से गवाह ऐसे श करूँगा जो आपको अभियुक्त की बदचलनी के बारे में रा पूरा ब्योरा बता देंगे। इतनी कार्यवाही के बाद पहली शी समाप्त हो गई।

इसके बाद की पेशी में सरकारी वकील ने कुछ गवाह पेश किये जिन्होंने अलीहसन चपरासी के साथ अभियुक्त के विशेष लपात की चर्चा की।

सेशन्स जज ने पुलिस के अभियोग और उसकी निर्दिष्ट धारा को स्वीकार कर लिया। फिर उन्होंने कुसुम से अपना बयान देने के लिए कहा। कुसुम ने इस प्रकार कहना शुरू किया—

सरकारी वकील साहब ने अभी जो यह कहा है कि मैं एक बदचलन औरत हूँ, सो यह बात सही है। मैं अब अपनी ज़िन्दगी से ऊब गई हूँ। और पाप ने मुझे इतना अधिक सुख नहीं दिया है कि अब अपने जीवन के अन्तिम समय में भी झूठ बोलूँ। मैं पापिनी अवश्य हूँ, लेकिन मैंने केवल एक बार पाप किया है और उसे भी अपने जीवन के नवयौवन काल में। मेरी एक सहचरी ने मेरी प्रवृत्तियों को ऐसा उभाड़ा कि मैं अपने काल में नहीं रह गई और अज्ञान में पड़ कर मैंने

पाप की कहानी गढ़ कर सरकारी वकील साहब ने स्वयं
एक बहुत बड़ा पाप किया है, जिसका उत्तर उन्हें ईश्वर की
दालत में देना होगा। मैं भगवान को साक्षी देकर कहती हूँ
अलीहसन मेरा पुत्र है, प्रेमी नहीं है और उसका पहले का
म राजाराम है। जब राजाराम उत्पन्न हुआ तब मेरे पिता-
ता ने अपने कुल की प्रतिष्ठा बनाये रखने के लिए मुझे
याग में लाकर छोड़ दिया। जिस दिन उन्होंने ऐसा किया
स दिन से लेकर चार वर्ष तक मैंने अपने पुत्र की रक्षा की
ख माँग माँगकर अपना और उसका भी पेट पाला। लेकिन
व-संयोग से राजाराम गंगा में डूब गया। मैंने उसे डूबा हुआ
मझा, लेकिन किसी मुसलमान ने उसकी रक्षा कर ली और
से पाल-पोस कर बड़ा किया। किन्तु उस मुसलमान में
मता नहीं थी, इसलिए, अलीहसन के रूप में मेरा राजाराम
योग से मेरे ही यहां नौकरी की तलाश में आया और मैंने
पने पतिदेव से सिफ़ारिश करके उसे नौकरी दिला दी। वह
रा पुत्र ही था, मैं उसके साथ पक्षपात क्यों न करती ? यह
क्षपात अन्य नौकरों को अप्रिय लगता था, और इस कारण कि
न्हें कोई प्रत्यक्ष कारण दिखाई नहीं पड़ता था, वे तरह तरह
ी बातें सोचते और गढ़ते थे। परन्तु, ईश्वर जानता होगा कि

अब रही यह बात कि रामकिशोर की हत्या मैंने क्यों की
कारी वकील साहब मुझे बदचलन कहते हैं और मैं राम
शोर को बदचलन कहती हूँ। रामकिशोर मेरे पीछे साल
ल से नहीं पड़ा था बल्कि मुझे उस समय से तंग कर र
जब मैं त्रिवेणी तट पर भीख माँगकर गुज़ारा करती थी
ने मुझे बहुत बहुत प्रलोभन दिये, लेकिन एक बार ही पा
के मैं इतनी संतुष्ट हो गई थी कि दुबारा फिर उसी रा
पाँव रखने की हिम्मत नहीं होती थी। कुछ दिनों के बा
मेरा लड़का भी खो गया तब अरइल के पास एक जग
पड़ी डालकर मैं अपने जीवन के दिन काटने लगी। राम
शोर को मेरा पता न लग सका, इसलिए बहुत दिनों त
से मेरा पिंड छूटा रहा। बाद को पति से मेरी भेंट हो ग
र मैं बनारस आकर रहने लगी।

इसके आठ नौ या दस साल बाद एक दिन मेरे पति
मुझसे पूछा—मेरा एक साथी मुसीबत में पड़ गया
ो तो उसे बुला लूं, लगान वसूली के काम की निगरा
सौंप दूँगा। मैं क्या जानती थी कि यही रामकिशोर पि
सिर पर सवार होने आ रहा है। मेरे घर आने पर इ
माश को ज्यों ही मेरा पता चला त्यों ही इसने मेरे पा

ड़ दूँगा। मैं भण्डा फूटने से अवश्य डरती थी लेकिन न
से उससे भी अधिक डरती थी। निदान, जब मैंने नहीं मान
उसने मेरे पतिदेव को मेरे सन्तानवती आदि होने का हा
अलीहसन के साथ मेरा अनुचित सम्बन्ध होने की बातें ग
बता दी। साथ ही उसने राजाराम को डरा धमका कर भग
ा। मेरे सतीत्व पर अनुचित आक्रमण का प्रयत्न, पति
कायत, समाज में बदनामी, बड़ी कठिनाई से अथवा
हुए कि ईश्वर के अनुग्रह से मिले हुए पुत्र का वियोग क
ा—ये सब बातें यदि हृदय में क्रोध नहीं उत्पन्न करेंगी
र वे कौन सी बातें हैं जो कर सकती हैं ? निदान मैंने अप
आप इस नर-पिशाच से बदला लेने का निश्चय किया।

पतिदेव का सन्देह इतना प्रबल हो गया कि वे आपे मे
। अन्त में उन्होंने मुझे ग्यारह बजे रात को घर से निका
दिया। मैं इस तिरस्कार के कारण और भी अधिक क्रो
उन्मत्त हो उठी और मैंने इस नराधम का अन्त करके आ
पराध को स्वीकार लेने तथा इस प्रकार गत दस वर्षों

स्त जनता ने मन्त्रमुग्ध की तरह सुना। यद्यपि अब कुसु
अवस्था तैंतीस वर्ष के लगभग थी तथापि उसके चेह
एक अद्भुत तेज और सुशीलता-जनित लावण्य था। य
ग्य अपने जीवन की त्रुटियों और भूलों को निस्सङ्कोच होक
कार कर लेने से घटा नहीं था, बल्कि और भी बढ़ गय
। इस समय सम्पूर्ण उपस्थित जन-समूह अपने हृदय
ोल कर मन ही मन सोच रहा था—क्या इस प्रकार
पनी यही एक है जो अभियुक्त होकर अदालत के साम
ी है? हममें से कितने हैं जिन्होंने कभी कोई पाप न
था? यदि बेचारी ने एक बार पाप का स्वाद चख क
ने को उसी के हवाले कर दिया होता और यदि
नकिशोर के कहने के अनुसार काम करने लग गई हो
भला क्यों यह ऐसी विडम्बना सहती? न इसे को
पिनी कहता, न पति घर से निकालता, और न अद
के सामने अपने पाप की कहानी इसे स्वीकार कर
ती। यह सच है कि सच्चे आदमी ही को तकलीफ़ें सह
ती हैं; झूठे और कपटी तो मौज से मज़े उड़ाते हैं और
नून उनके रास्ते में कोई रुकावट डालता है, न समाज
की आलोचना करता है।

ाफोड़]

भी कुसुम के बयान का काफ़ी प्रभाव पड़ा। ज्यों ही व
ड़ कहने को हुआ त्यों ही अदालत में सन्नाटा सा छा गया
ने कहा—यदि हम अभियुक्त के बयान के आधार प
ें तो उस पर उस क़ानून का रोष बहुत संयत हो जात
जिसके भीतर वह अपराधिनी सिद्ध की जा रही है
न्तु उसके बयान की भी बहुत सी बातें ऐसी हैं, जिनक
ाण आवश्यक है, साथ ही, जिनको जानना कठिन है। उद
ण के लिए, इस बात का पता लगाना कठिन है कि अभियुक
आचरण आगे चल कर अच्छा रहा या नहीं। और जब त
सम्बन्ध में पूर्ण सन्तोष न हो सके तब तक इस बयान क
कोई मूल्य नहीं। अब हमें यह देखना है कि यदि इस ए
न पर विशेष ज़ोर न दें तो भी यह बयान कुछ काम
कता है या नहीं। यदि यह प्रमाणित किया जा सके कि राम
शोर ने उसकी काफ़ी हानि की थी तथा उस पर छुरे क
ार करते समय अभियुक्त उचित क्रोध से उन्मत्त हो र
तो उसका काम चल जायगा। इसके लिए परिस्थिति प
ाश डाला जाना और उसी की दृष्टि से गवाहों का बया
ा ज़रूरी है। क्या अभियुक्त की ओर से पैरवी करने वा
ील इस प्रकार की गवाही पेश करने को तैयार हैं ?

[३६]

दैनिक पत्रों में कुसुम के बयान की रिपोर्ट पढ़ कर त्रिवेदी-नारायण दंग रह गये। अलीहसन के साथ उसका अनुचित सम्बन्ध नहीं था, यह जानकर उन्हें कुछ सन्तोष हुआ, यद्यपि यह समाचार कि उसने जीवन में एक बार व्यभिचार किया था, और उसी के परिणाम-स्वरूप अलीहसन उर्फ़ राजाराम की

का वध करके कुसुम ने जिस तेजस्विता का परिचय दिय
वह आनन्दप्रद थी।

त्रिवेदीनारायण आरामकुर्सी के सहारे पड़े हुए यही स
च रहे थे कि उनके दो आर्यसमाजी वकील मित्र, जिन्होंने ग
ायों पर कुसुम की ओर से पैरवी की थी, आ गये। नमस्
ादि होने के बाद वकीलों ने कुर्सियों पर बैठ कर कहा–
पको हम लोग रामकिशोर की हत्या के मामले में सफ़ा
ओर से गवाह बनाना चाहते हैं।

त्रिवेदीनारायण—मुझे तो आप लोग न घसीटें तो
च्छा हो। मेरा चित्त बहुत खिन्न है।

वकीलों में से एक ने कहा—श्रीमती जी को फाँसी दिल
ने की इच्छा तो आप की होगी नहीं। यदि उनकी ज़िन्दग
ा ली जाय तो विश्वास है कि वे समाज के लिए बिलकु
उपयोगी न होंगी। किसी अनाथालय या सेवासदन
म उनकी निगरानी में रक्खा जा सकता है। और आप
ई कष्ट भी नहीं होने पावेगा, केवल सच्ची बातें अदालत
मने कह देनी होंगी।

त्रिवेदीनारायण ने कहा—यदि आप लोगों का ऐसा
ग्रह है तो मुझे कोई आपत्ति नहीं है।

लने पावे। इससे बड़ी भारी हानि की संभावना है। क्योंकि
सरकार की मंशा है कि अभियुक्त को पूरा पूरा बदचलन
साबित करके उसको अधिक से अधिक सज़ा दिलाये।

अच्छी बात है, इतना तो मैं ज़रूर ही कर दूँगा। जो कुछ
ने अख़बारों में पढ़ा है उससे कुछ तो मैं भी सोचता हूँ कि
बात उतनी संगीन नहीं थी जितनी मैंने समझा था और एक
कपटी आदमी के चक्कर में पड़ कर मैंने धोखा खाया। ख़ैर,
अब तो जो हुआ सो हुआ।

एक मित्र ने कहा—अजी साहब, ग़लतियाँ आदमी ही से
होती हैं। लेकिन बेईमान और बदमाश आदमी ज़रा सी बात
को ऐसा बढ़ा देते हैं कि अनर्थ मच जाता है। इस मामले में
भी ऐसा ही हुआ है।

इसके बाद दोनों वकील चले गये। पंडित जी फिर विचार-
सागर में डूब गये।



सरकार की ओर से अजीब अजीब गवाह पेश किये गये। कोई तरकारी बेचने वाली औरत थी, जो शायद पंडित जी के

किया और काफ़ी संख्या में ऐसी बातें कहला लीं जिनसे यह सिद्ध हो सकता था कि इन लोगों की सारी जानकारी सुनी-सुनाई बातों पर निर्भर है।

सफ़ाई के गवाहों में प्रधान गवाह स्वयं त्रिवेदीनारायण थे। सरकारी वकील ने उनसे इस प्रकार बहस की।

स० व०—क्या अभियुक्त आपकी स्त्री है?

त्रि०—हाँ।

स० व०—वह आपके साथ कितने दिन से है?

त्रि०—दस वर्षों से।

स० व०—आपकी वह विवाहिता स्त्री है या रखेल?

त्रि०—विवाहिता।

स० व०—आपका विवाह कब हुआ था?

त्रि०—मेरा विवाह हुए सोलह वर्ष से ऊपर हो गये।

स० व०—तो ब्याह होने के बाद छः वर्ष तक आपकी विवाहिता स्त्री अपने मायके में रही, उसके बाद आप उसे घर में लाये। क्या आप लोगों में इस तरह का कोई रिवाज है?

त्रि०—नहीं रिवाज की वजह से ऐसा नहीं हुआ। अपने पिता से रुष्ट होकर मैं कलकत्ते होता हुआ रंगून को चला गया था। वहां कुछ ऐसा फँस गया कि कई वर्षों तक न आ सका।

स० व०—वहां आप कैसे फँस गये, क्या इसको भी स्पष्
त से बता सकते है ?

त्रि०—इसे जान कर आप क्या करेंगे ? जो आपके मतलब
बात हो उसे पूछिए ।

स० व०—अच्छा, ख़ैर, तो यह बताइए कि आपकी पत्नी
: वर्ष तक मायके में रही ?

त्रि०—नहीं, वह जहां और जैसे रही वह सब उसने अपने
यान में स्वयं कहा है, मेरे दुहराने की कोई ज़रूरत नही है

स० व०—अच्छा, आपने अपनी स्त्री को निकाल दिया य
ह अपने आप घर से निकल आई ?

त्रि०—नहीं मैंने उसे निकाला और केवल रामकिशो
भड़काने पर। यदि अलीहसन के साथ अनुचित सम्बन्ध की
त उसने मेरे चित्त पर न जमा दी होती तो मैं उसे कभी न
काालता, क्योंकि वह जिस प्रकार घर का प्रबन्ध करती थी
ौर जिस कौशल के साथ सब से व्यवहार करती थी वह
ादर्श था। मैं यह नहीं जानता था कि जीवन में उससे एक
ी बार भूल हुई है।

स० व०—क्या आप अभियुक्त के इस कथन पर विश्वास
रते हैं ?

स० व०—आपने उसे रात को कै बजे घर से निकाला ?

त्रि०—लगभग ग्यारह बजा होगा ।

इस जिरह के बाद सरकारी वकील ने कुसुम से जिर
ना शुरू किया—

स० व०—क्या आप यह बता सकती हैं कि आपने राम
शोर की हत्या का विचार कब किया ?

कु०—पति के क्रुद्ध होने पर मुझे अपना जीवन व्यर्थ
न पड़ा और अपनी इस दुर्दशा का कारण रामकिशोर
झ कर मैंने उसके जीवन का अन्त करके अपनी समा
करने का निश्चय किया ।

स० व०—घर से निकाली जाने के कितनी देर बाद आप
किशोर पर वार किया ?

कु०—बीस-तीस मिनट के बाद ।

स० व०—क्या आपके पति ने आपको एकाएक धक्का दे
ाल दिया ?

कु०—मैं यह नहीं जानती थी कि मेरे पति मुझे घर
ाल देंगे, किन्तु उस रात को रामकिशोर की हत्या करने
ार तो मैंने कर ही लिया था और इसी उद्देश्य से छुरा
ने पास रख लिया था ।

कु०—करती क्यों नहीं थी, लेकिन यदि किसी की नीय
ाब होती थी तो उससे किनारा कर लेती थी।

स० व०—क्या ऐसे भी कोई आदमी आपको मिले जिनक
यत ख़राब समझकर आपने उनका साथ छोड़ दिया ?

कु०—ऐसे आदमियों में रामकिशोर एक ख़ास आदम
। इसने मुझे बहकाने का बहुत उद्योग किया।

स० व०—अच्छा, यह बताइए कि जिस एक आदमी
थ आप का अनुचित सम्बन्ध हो गया था वह कौन थ
र कहाँ का था ?

कु०—वर्तमान अभियोग से इस प्रश्न का कोई सम्बन्ध है
थवा आप व्यर्थ ही मुझे परेशान करना चाहते हैं ?

स० व०—नहीं, नहीं, इसी अभियोग से सम्बन्ध है।

कु०—मुझे बताने में कोई आपत्ति नहीं है, क्योंकि अब
ई बात छिपाना नहीं चाहती। मेरे पिता कलकत्ते में एक ऊँ
रकारी कर्मचारी थे। मैं उन्हीं के साथ रहती थी। व
कत्ते ही मे 'भ्रमर' उपनाम से एक पुरुष ने मेरे पा
ट्ठियां भेजी थीं। और इसी तरह की दिल्लगी में पड़ क
भी 'कमल' नाम से उन चिट्ठियों का उत्तर दिया था
न्तु वे अचानक न जाने कहां लापता हो गये। फिर जीव

त्रिवेदीनारायण कुसुम की इन बातों को बड़े ध्यान स
रहे थे। 'भ्रमर' और 'कमल' शब्द कानों में पड़ते ही
क उठे ; कुछ सोचने लगे और जब तक उसकी बातें समा
तब तक ज़ोर से बोल उठे—क्या कहा ? 'कमल' तुम हो
मल' तुम हो !!—यह कहते कहते भावावेश से त्रिवेदीनार
ज़मीन पर गिर कर मूर्छित होगये।

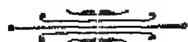
अदालत का और अदालत में उपस्थित सम्पूर्ण दर्शक
डली का ध्यान इस विचित्र घटना की ओर आकर्षित
। कुसुम की जिरह रुक गई, सरकारी वकील, सफ़ाई
ील आदि सभी लोग तरह तरह के अट सलंड़ाने लगे।

अदालत की आज्ञा से अर्दली ने त्रिवेदीनारायण का मुँ
कर पंखा झलना शुरू किया। धीरे धीरे उन्हें होश आ
उन्होंने कहा—अदालत से मेरी प्रार्थना है कि इस दे
निर्दोष समझ कर छोड़ दे। इस स्त्री की सारी कठिन
ों की सृष्टि करनेवाला स्वयं मैं हूँ। घर से भाग क
कुछ दिनों तक कलकत्ते में ठहरा था और यद्यपि य
समय मेरी विवाहिता स्त्री थी तथापि अज्ञात रूप से मैं
को व्यभिचार में प्रवृत्त करके तथा बाद को होने वा
कष्टों का समस्त भार इसी पर डाल करके मैंने ऐसा प

फ़ोड]

इसके चित्त में इस बात का उपस्थित रहना कि मैंने व्यभि
किया है, हृदय के निगूढ़ स्थल में पति के सम्मुख स्व
कलङ्किनी समझना, माँ होकर भी पुत्र को पुत्र की तर
र न कर सकना, यही क्यों उसके साथ अनुचित सम्बन्ध क
n-धारणा से उत्पन्न होने वाले कष्टों को सहना—आह ! इ
का उत्तरदायित्व मुझ पर है ? जज महाशय ! रामकिशो
हत्या का अप्रत्यक्ष कारण मैं हूँ और मेरा अपराध इतन
ा है कि उसकी सफ़ाई सैकड़ों वकील भी नहीं दे सकते
ी दशा में इस अभियोग का जो कुछ भी दण्ड हो वह मु
लना चाहिए।

त्रिवेदीनारायण के इस कथन को सुन कर जज महाश
थोड़ी देर के लिए सन्नाटे में आ गये। सम्पूर्ण अदालत
ी निस्तब्धता छा गई कि सुई गिरने की आवाज़ भी का
पड़े बिना नहीं रह सकती थी। थोड़ी देर तक जज साह
त चिन्ताशील हो गये। फिर अभियोग की कार्यवाही
ाप्त करके उन्होंने उच्च स्वर में घोषित किया कि निर्ण
न दिनों के बाद सुनाया जायगा।



[३८]

नियत तारीख़ पर जज साहब ने अपना निम्न-लिखित निर्णय सुनाना आरम्भ किया—

वास्तव में यह एक पेचीदा अभियोग है। हत्या के पहले अभियुक्त की यथेष्ट मानसिक उत्तेजना के कारण स्पष्ट हैं। यह तो अब निर्विवाद है कि वह एक प्रतिष्ठित कुल की सच्चरित्र स्त्री है। ऐसी स्त्री के सुव्यवस्थित गार्हस्थ्य-जीवन में

दू, विशेष कर ब्राह्मण स्त्री की जो दुर्दशा हो सकती
। तक पहुँचा करके, रामकिशोर ने अपनी हत्या के लि
भाविक कारण उपस्थित कर दिया था और मेरा तो य
ाल है कि यदि रामकिशोर की सौ ज़िन्दगियां होतीं तो र
: उसकी हत्या करना भी, उसके अपराध को देखते हुए
सी स्वाभिमानिनी स्त्री के लिए अस्वाभाविक न होता।
यह स्पष्ट है कि अलीहसन उर्फ़ राजाराम अभियुक्त औ
सके विवाहित पति की संतान है और यह समस्त कठिना
: साधारण भूल के कारण खड़ी हो सकी है। त्रिवेद
ायण ने अपनी विवाहित स्त्री के साथ कलकत्ते में प
र पत्नी रूप में नहीं, बल्कि प्रेमी और प्रेमिक रूप में सह
स किया। इस सहवास के समय दोनों की अवस्था क़ानू
दृष्टि से उन्हें बालिग़ सिद्ध करती है, क्योंकि यह मामल
ाह-अठारह वर्ष के बाद का है और इनमें से स्त्री की उ
समय तैंतीस वर्ष के लग भग है और पुरुष की छत्ती
। ऐसी स्थिति में दोनों ने जान बूझ कर पाप कर्म कि
र दोनों ही उसके परिणामों को भोगने के लिए बाध्य हैं
भियुक्त के पक्ष में यह कहा जा सकता है कि उसे जीवन
वश्यक से अधिक दण्ड मिल चुका है अतएव मैं अभियु

तु, साथ ही काशी आर्यसमाज के सभापति पं० त्रिवेद
ायण की स्थिति को बहुत कमज़ोर बना दिया। उन्हे अप
ओं की बधाइयों को स्वीकार करते समय बहुत झेंपना पड़ा

घर में दादी और कमला के हर्ष में शोक भी मिश्रित थ
इसलिए कि कुसुम छुट कर सकुशल घर आ गई तथा कु
प्रतिष्ठा बच गई और शोक इसलिए कि राजाराम न जा
ां चला गया।

दादी की आँखों में आँसू देखकर कुसुम ने कहा—दा
र्थ दुखी मत होओ। ईश्वर मेरे ऊपर अनुकूल होंगे
ाराम भी ज़रूर लौट आवेगा।

कमला सामने खड़ी थी। कुसुम की इस आशावादिता
बहुत उत्साह मिल रहा था।

दादी ने आँसुओं को पोंछते हुए कहा—बहू, मैं तो स
ानी हूँ, मेरा भैया आवेगा तो इसी कमला के भाग्य से
तो जब से जाना कि वह तेरी गोदी का लाल था तभी
सोच रही हूँ कि कमला का उससे विवाह होता तो कै
च्छा होता।

कु०—मेरी तो न जाने कितने दिनों से यही अभिलाषा
ही, परन्तु, तब तो होठों पर ऐसा नही ला सकती थी। अ

स्त्रियों ने ज्योतिषी को बुलवाकर पूछताछ की पंडित ज
आर्यसमाजी विचारों की परवा न करके एक ब्राह्मण क
ा-पाठ पर भी बैठा दिया ; और भी जो कुछ हो सका स
किया। ईश्वर से प्रार्थना की ; आँखों के जल से उन
लाया ; रोम रोम से राजाराम को वापिस भेज देने के लि
ह्वान किया। पं० त्रिवेदीनारायण ने यह सब करने के लि
ाय न निकाल कर अपने संगठन-बल से राजाराम को वापि
ाने का प्रबन्ध किया। उन्होंने थाने में हुलिया करवा दी औ
हज़ार रुपये इनाम घोषित कर दिया। किन्तु, यह सब कर
भी राजाराम का कहीं पता न चला। सब तरह से निरा
कर जब एक दिन त्रिवेदीनारायण घर पहुँचे तब नित्य क
ह दादी और कुसुम उनके पास पूछने के लिए आईं कि कु
ां लगा या नहीं।

त्रिवेदीनारायण ने कुछ उत्तर नहीं दिया। किन्तु, उनक
खों से निकलने वाले आँसुओं ने सब बातें बता दीं। कुसु
कलेजा पकड़ लिया, दादी की कमर ही टूट गई और बेचा-
ाला की तो आकांक्षाओं का महल ही टूट गया। घर भ
व्याकुलता का भाव फैल गया।

राजाराम को ढूँढ़ने के सब प्रयत्न तो विफल हुए, लेकि

लेगा। दादी कुसुम का प्रबोध करती तो कुसुम त्रिवेदीनारा-
ग का ढाढ़स बँधाती, लेकिन सच पूछिये तो तीनों ही
क दूसरे को समझाने के योग्य नहीं थे, समय पड़ने पर सभी
धीर हो जाते थे।

राजाराम के वियोग से यों तो सभी को कष्ट था, लेकिन
दे यह कहा जाय कि कमला का कष्ट सबसे अधिक था तो
क दृष्टि से इसमें कोई अतिशयोक्ति नहीं। कारण यह कि
सुम, त्रिवेदीनारायण आदि तो खुल्लमखुल्ला उसके लिए
धो कर भी अपने हृदय को समझा-बुझा लेते थे, किन्तु
मला के लिए यह साधन भी सुलभ नहीं था। दादी ने राजा
म के साथ उसके विवाह की कल्पना करके तथा उसक
थेष्ट प्रचार करके कमला के मुँह में ताला लगा दिया था
था उसकी आँखों को आँसू दिखलाने से मना कर दिया था
सी दशा में भीतर की आग बुझने के कोई लक्षण नहीं थे।

कहावत है कि प्रीति और खाँसी दबाये नहीं दबती, छिपाये
हीं छिपती। कमला का प्रेम भी छिपाने से अब छिप नहीं
का। वास्तव में वह राजाराम को उसी दिन से चाहने लगी
ी जिस दिन उसने उसे देखा था। लेकिन उसके प्रेम
ास्ते में बहुत बड़ी बाधा थी। यदि वह आरम्भ से ही राजा

ृष्य अलीहसन होकर उसके सामने आया तब अपने हृद
भावों को दबाने के सिवा वह कुल-बाला और क्या क
ती थी। राजाराम पर सबने कलंक आरोपित किया, परन
ला ने उस पर से अपना विश्वास नहीं हटाया। उसे पू
भरोसा था कि मामी अलीहसन को लड़के की तर
नती हैं और इसके लिए वह कितनी कृतज्ञ थी, यह कह
बात नहीं। इसी से जिस दिन लोगों द्वारा सताये जाने
ए अलीहसन एकाएक भाग गया उस दिन तो अन्न-ज
ग कर वह कई दिनों के ज्वर की तैयारी कर बैठी थी
ी अवस्था में यह सहज ही अनुमान किया जा सकता है
ीहसन के राजाराम-रूप में प्रकट होने से उसे कितना आ
हुआ होगा, साथ ही उसके वियोग ने उसके हृदय में कैस
ड़ा का संचार किया होगा। वेदना के वेग को सहन
क्त होकर वह फिर बीमार पड़ गई और अपने जि
को उसने इतने दिन तक गुप्त रक्खा उसे ज्वरोन्माद
स्था में इस प्रकार प्रकट करने लगी—राजाराम ! राज
! अलीहसन ! अलीहसन ! ऐ मेरे प्यारे राजाराम
ाँ हो मेरे राजाराम ! हा हा हा ! आदि आदि।

कई दिनों तक कमला की यही अवस्था रही। सब लो

दशा होती थी दूसरी ओर त्रिवेदीनारायण समाचार-पत्रों द्वारा, पुलीस द्वारा तथा अन्य जिन किन्हीं साधनों से सम्भव समझते, राजाराम का पता लगाने की कोशिश करते थे। धीरे धीरे कमला तो अच्छी हो गई, किन्तु, राजाराम का पता नहीं चला। उसके वियोग के कारण घर के सभी लोगों की दशा शोचनीय हो गई। अपनी कोशिशों में पंडित जी असफल होने पर प्रायः उन लोगों पर अपना क्रोध उतारते थे जो उनके आसपास होते और जिन्हें वे राजाराम को भागने के मामले में सहायक समझते थे।



[३६]

त्रिवेदी नारायण के यहाँ से भाग कर राजाराम गंगा के किनारे गया। वहाँ वह इधर उधर घूमता रहा। संध्या का समय था। उसे भूख लग आयी। कुछ रुपये उसके जेब में पड़े थे। पास ही हलवाई के यहाँ से पूड़ी लाकर उसने खाया

ख़ुदा किया क्यों ज़मीं पै पैदा
जो ठोकरें था सदा खिलाना ?
दिया ही फिर आदमी का तन क्यों,
किसी ने जब आदमी न माना ?
तमाम ऐशो आराम में है.
गुज़ारता ज़िन्दगी को कोई।
हमें है दुशवार साँस लेना,
है रात-दिन अश्क़ ही बहाना।
नहीं समझता कोई कि हम सब,
बने हैं बस मुश्ते ख़ाक से इक।
अमीर को भी ग़रीब को भी,
है एक दिन ख़ाक ही हो जाना।

इसी समय एक बूढ़े साधु वहीं आ गये और चुपचाप गाना सुनने लगे। राजाराम को यह बिलकुल नहीं मालूम हुआ कि यहाँ कोई आ गया है।

गाना समाप्त होने के बाद राजाराम ने ज्यों ही दृष्टि फेरी त्यों ही सामने साधु को खड़े देखकर वह नम्रता से धरती पर गड़ सा गया। चरणों के पास माथा रख कर उसने प्रणाम किया।

साधु ने मुसकरा कर आशीर्वाद दिया और पूछा—बेटा,

म्हारे गाने में इतनी मधुरता न आती। भला बेटा, बताओ तो
ही, तुम्हारे ऊपर क्या मुसीबत पड़ी है?

मेरे दुःखो की कहानी बड़ी लम्बी है, महात्मा जी, और आप
। उससे कुछ लाभ नहीं होगा—राजाराम ने उत्तर दिया।

साधु ने तुरन्त ही कहा—मुझे लाभ होगा या नहीं, इसे
म नहीं समझ सकते बेटा! मेरा काम ही क्या है। भगवान
ा भजन करना और तुम्हारे जैसे दुखी लोगों की सहायत
रना। मुझे छोटी और लम्बी कथा में भेद नहीं करना है
ा, मैं यहीं आसन लगा कर बैठ जाता हूँ, तुम अपना पूर
ल सुनाओ, शायद मुझसे तुम्हारी कुछ सहायता बन पड़े।

यह कह कर साधु ने एक चौड़ी सीढ़ी पर अपना झोल
ादि रख कर आसन लगा ही लिया।

राजाराम भी सामने बैठकर बोला—महाराज! मैं बहुत
भागा लड़का हूँ। लड़कपन से ही मेरे माता पिता का को
ा नहीं।

सा०—अच्छा तो तुम्हारी परवरिश किसने की?

रा०—एक मौलवी साहब ने।

सा०—तो तुम्हें यह कैसे मालूम कि वे तुम्हारे पित
हीं हैं?

नहीं हो सकती। हाँ, माता ज़रूर, मुझे थोड़े दिन हुए, मिल गई। उनकी दया देख कर मैं उन्हें माता से भी बढ़ कर मानता हूँ। वे स्वयं कहती हैं कि मेरी माता वे ही हैं। परन्तु, बात समझ में नहीं आती।

सा०—सो क्या ?

रा०—मैं उनका लड़का किस तरह हुआ सो समझ में नहीं आता ?

सा०—उसमें कठिनाई क्या है ?

रा०—महाराज ! बात यह है कि अपने मौलवी साहब के अत्याचारों से ऊब कर मैंने यहीं के एक रईस के यहाँ नौकरी कर ली। आप तो उन्हे जानते होंगे वे शहर के आर्यसमाज के सभापति हैं।

कहने को तो झोंक में राजाराम यह कह ले गया, लेकिन तुरन्त ही उसने सोचा कि यह सब न कह कर मुझे गोल मोल बातें करनी चाहिए थीं। इसलिए आगे वह जो कुछ कहने जा रहा था उसे रोक कर बोला—महाराज ! देखिएगा, यह बात कहीं प्रकट न कीजिएगा, नहीं तो मेरे ऊपर आफ़त आ जायगी।

तुम इसके लिए निश्चिन्त रहो। मैं तुम्हारा अहित नहीं होने दूँगा, बेटा।

म हो गई। उसने फिर कहा—वहीं, मालिक के घर में जो ालकिन बहू हैं वही मुझसे कहती हैं कि मैं तेरी मां हूँ।

साधु ने ज़ोर से कहा—ठीक तो है, जितने अनाथ बच्चे हैं ाभी शीलवती देवी के लिए लड़के ही हैं।

नहीं, नहीं,—राजाराम ने तुरन्त ही कहा—उस तरह की ां नहीं, वे तो कहती हैं कि मैं तेरी जन्मदात्री माँ हूँ।

सा०—अच्छा, फिर क्या हुआ ?

रा०—हुआ तो संक्षेप में यह कि उनके व्यवहार के कारण ूसरे नौकर-चाकर मुझसे ईर्ष्या-द्वेष करने लगे और उनके ारण मुझे वहां से भागना पड़ा। लेकिन मैं सदा यही सोचा करता हूँ कि आख़िर मामला क्या है ? देवी जी मुझे क्यों अपना लड़का बतलाती हैं। और, आपको यह भी बता दूँ कि ंडित जी की कोई सन्तान जीवित नहीं है, एकाध बच्चे हुए, ो होते ही मर गये।

सा०—बच्चा, है तो यह एक पहेली। अब संध्या करने का समय आगया। उससे निबट लूँ तो तुमसे फिर बातें करूँ।

'अच्छा' कह कर राजाराम थोड़ी दूर अलग चला गया और अपना वही प्यारा पुराना गीत गुनगुनाने लगा।

[४०]

संध्या से छुट्टी पाने पर साधु ने राजाराम को फिर बुलाया और कहा—बच्चा, यद्यपि मैं इस नगरी में आज ही बहुत दिनों के बाद—शायद सोलह वर्ष के बाद आया हूँ और मेरे परिचितों में से न जाने कौन मरा होगा, कौन जीता होगा, फिर भी अगर तुझे कोई नौकरी चाकरी करनी हो तो मुझसे

कती, इसलिए मैं किसी की नौकरी नहीं करूँगा। किसी
रह पेट न पलेगा तो भीख माँग कर ही खालूँगा।

सा०—ना बेटा, बल्कि तुम्हे यह कहना चाहिए कि किसी
रह पेट न पलेगा तो किसी की चार बातें सहकर भी सिह
त करूँगा और अपने दिन काटूँगा। भीख माँगना भले
ादमी का काम नहीं है। तुम अभी लड़के हो, ऐसी बुरी
ादतों में तुम मत पड़ो। इससे आत्मा का हनन हो जात
।

रा०—आत्मा का हनन क्या महाराज ? इसे तो मैंने नही
मझा।

सा०—बच्चा, यह तो देखते ही हो कि कोई चार बाते
हे बिना मुफ्त मे एक पैसा भी नहीं देता। अपमान सहते
हते जब बेहयाई आ जाती है तब कहा जाता है कि इस
नुष्य की आत्मा का हनन हो गया।

रा०—महाराज ! यदि मैं आप ही के साथ रहूँ तो क्या
र्ज है ? मेरे दुखी चित्त को आपकी बातों से बहुत शान्ति मिल
ही है।

सा०—लेकिन बेटा, मेरे साथ तू अधिक दिन रह नहीं
केगा। और अगर रहेगा तो यह तेरा शरीर, जो अभी

सा०—नहीं, नहीं, अभी तू मेरे साथ नहीं रह सकेगा
मुझे कल ही किसी प्रतिष्ठित आदमी के यहां काम पर लग
ा।

रा०—परन्तु, काम में मेरा जी न लगेगा, महाराज
ी अम्मा के वियोग में मुझे बेहद तकलीफ़ है।

साधु ने हँस कर कहा—तो क्या मेरे साथ रह कर तू चै
हलुआ और मालपुआ उड़ाना चाहता है? मैं वैसा अभी
ु नहीं हूँ, बच्चा। मैं तो भगवान का ग़ुलाम हूँ। उनक
री में कभी रोटी का एक टुकड़ा मिल भी जाता है, कभ
ीं भी मिलता।

राजाराम ने चकित होकर पूछा—तो महाराज! भगवा
ा मुफ़्त ही में काम लेते हैं, फिर तो वे मेरे मौलवी साहब
अधिक कंजूस और अनुदार हैं।

साधु फिर हँस कर बोले—नहीं, नहीं, न वे कंजूस
र न अनुदार हैं, उनके समान तो कोई दाता ही नहीं;
सी चीज़ देते हैं जो संसार में कहीं मिल नहीं सकती
किन यह सच है कि वे चीज़ें हलुआ और मालपुआ नहीं है

फिर वह क्या है बाबा जी? राजाराम ने बहुत विन

आनन्द, शान्ति। जो आनन्द और जो शान्ति किसी करोड़पति को नहीं प्राप्त है वह मुझे प्राप्त है।

राजाराम ने आर्त्त स्वर से कहा—तो शान्ति ही तो मुझे भी चाहिए, महाराज! छोटी अम्मा से अलग होकर भी अगर मैं कहीं शान्ति से रह सकूँगा तो आप ही के श्री-चरणों में।

साधु ने थोड़ी देर तक विचार-मग्न रह कर कहा—अच्छा, अगर तेरा ऐसा ही आग्रह है तो मुझे कुछ आपत्ति नहीं है।



[४१]

तबियत बहलने का कोई उपाय न देख कर कुसुम की उपस्थिति में एक दिन त्रिवेदीनारायण ने कहा—चाची अगर राय हो तो तीर्थाटन करने चलें। यह बात न केवल वृद्धा को बल्कि कुसुम को भी पसन्द आ गई। शीघ्र ही पूरा परिवार तीर्थ-यात्रा के लिए निकल पड़ा।

[त्रि]वेदीनारायण तथा दादी का कष्ट भी थोड़ी देर के लिए हल्का [हो] गया। किन्तु कमला का तो कहीं जी ही नहीं लगता था। [क]ल्पना के राज्य में वह कभी राजाराम से बातें करती, कभी [उस]से उलहने देती, कभी अपना प्यारा गाना सुनानेको कहती [औ]र कभी स्वयं हारमोनियम पर कोई गीत गाकर उसे रिझाने [क]ी चेष्टा करती। ये बातें उसे इतनी वास्तविक मालूम होती थी [कि] बाहर की सभी वस्तुएँ उसे स्वप्न सी प्रतीत होती थी।

हरद्वार में पहुँचने पर जब सब लोग गङ्गा-स्नान कर रहे [थे], उस समय कमला ने दादी का ध्यान एक लड़के की ओर [आ]कर्षित किया। यह लड़का राजाराम से बिलकुल मिलता [जु]लता था। दादी ने कुसुम को बताया और कुसुम ने त्रिवेदी[ना]रायण को। तब तक लडका गङ्गा में से जल्दी जल्दी निकल [क]र भागने की चेष्टा करने लगा। त्रिवेदीनारायण ने बड़े ज़ोर से [चि]ल्ला कर कहा—पकड़ो, पकड़ो, इस लड़के को, जाने न पावे [दो] तीन आदमियों ने उसे पकड़ लिया और जब तक त्रिवेदी[न]ारायण बाहर निकले तब तक उनकी घबराहट से भरी हुई [उन]की आवाज़ के कारण इस भ्रम में पड़ कर कि लड़का शायद [कु]छ चोरी आदि करता रहा हो, वहाँ एक ख़ासी भीड़ [ज]मा हो गई। त्रिवेदीनारायण को निकट आते देख कर लड़का

गया, साथ ही सम्पूर्ण उपस्थित जनता भी चकित और स्मित हो गई। शीघ्र ही कुसुम ने वहाँ पहुँच कर उसे गोद ाया और पुलकित होकर कहा—बेटा, डरो मत और न अचर ो, अपने पिता के पैरों पर गिर कर प्रणाम करो। राजारा वेदीनारायण के पैरों पर पड़कर रोने लगा। धीरे धीरे दा वहाँ पहुँच गईं। कुसुम ने उसे पंडित जी के पैरों पर ा कर दादी से प्रणाम करने को कहा। दादी ने आँखों नन्द के आँसू भर कर आशीर्वाद दिया।

थोड़ी दूर पर बैठे हुए एक बूढ़े साधु इस विचित्र दृश्य त चकित-विस्मित होकर देख रहे थे। एकाएक उनके जी या कि चलकर देखें, मामला क्या है। भीड़ ने साधु दरपूर्वक स्थान दिया, उनकी ओर त्रिवेदीनारायण ने दर-दृष्टि फेरी। किन्तु उपस्थित जनता ने फिर एक नय य देखा—पिताजी! पिताजी!! मुझ अधम और पापी ा करो, आदि कहते हुए त्रिवेदीनारायण उनके चरणों प ड की तरह लोट गये।

साधु की आँखों से आँसुओं की वर्षा होने लगी। कुसुम ही, कमला, राजाराम तथा उपस्थित जनता के कौतूहल न था।

अरुणोदय

[विविध विषय-विभूषित मनोहर
मासिक पत्र]

सम्पादकः—

पं० गिरिजादत्त शुक्ल बी० ए०

वार्षिक मूल्य ढाई रुपया, छः माही डेढ़ रुपया

जगद्गुरु का विचित्र चरित्र

निराला उपन्यास

[गिरीश-रचित]

हिन्दी-साहित्य में यह उपन्यास एक विशेष स्थान रखता है। हिन्दी में भौंड़ा, अशिष्ट, कुरुचिजनक परिहास-साहित्य भले ही हो, परन्तु उच्चकोटि के व्यङ्ग और मृदुहास से परिपूर्ण रचनाओं का सर्वथा अभाव है। गिरीश जी ने इस नवीन शैली का समावेश करके हिन्दी-साहित्य का असीम उपकार किया है। एक वार मँगा कर इस अनूठी रचना का रसास्वादन कीजिए; इसका चमत्कार आप के हृदय में अपार आनन्द का संचार करेगा। मूल्य केवल आठ आना।

ब्रिटिश सरकार

और

भारत का समझौता

स्वराज्य आन्दोलन के इतिहास, वाइसराय के नाम महात्मा गाँधी के पत्र, सन्धि के लिए सप्रू-जयकर की दौड़ धूप, राउण्ड टेबुल कानफ्रेन्स के तमाशे के रोचक वर्णन, **लन्दन में भारतीय माडरेटों की ताक्-धिनाधिन नाच,** तथा उस पर मज़ेदार टीका-टिप्पणी-सहित सजिल्द, दो रंग के बढ़िया व्यंग चित्र से पूर्ण और प्रोटेक्टिंग कवर से विभूषित पौने दो सौ से अधिक पृष्ठो की पुस्तक का दाम केवल एक रुपया ।

['बाबू साहब']

उपन्यास

[illegible]

चरित्र-चित्रण में भी आपने रचना-चातुरी और कला-कुशलता का अच्छा परिचय दिया है। 'अजीत' के भावों के प्रस्फुटन, उसके मनोविकारों के तारतम्य, उत्साह की तरंगभंगो, आदर्शवाद और यथार्थवाद के झकोरों, राग-विराग की प्रतारणाओं आदि के वर्णन में आपने सराहनीय कौशल प्रदर्शित किया है। उपन्यास की भाषा भी सरल, सुबोध, लचीली और फबीली है। मानसिक विकारों की सूक्ष्म ऊहापोह में भाषा की सरलता और सबलता को संयुक्त रखना आपकी लेखन-कला